द्वितीय अध्याय

खंडकाव्य का स्वरूप
एवं नागार्जुन के खंडकाव्य

द्वितीय अध्याय

खंडकाव्य का स्वरूप
एवं
नागार्जुन के खंडकाव्य

अ)

1. काव्य का स्वरूप
2. काव्य की परिभाषा
3. काव्य का वर्गीकरण
4. प्रबंध काव्य : स्वरूप
5. प्रबंध काव्य के उपभेद
6. खंडकाव्य का स्वरूप
7. खंडकाव्य की परिभाषा
8. खंडकाव्य का वर्गीकरण
9. खंडकाव्य : विशेषताएँ
10. खंडकाव्य के लक्षण
11. खंडकाव्य के तत्व

आ)

1. खंडकाव्य और महाकाव्य
2. खंडकाव्य और एकार्थ काव्य
3. खंडकाव्य और चरित्र काव्य
4. खंडकाव्य और प्रेमाख्यानक काव्य

इ) नागार्जुन के खंडकाव्यों का स्वरूप :-

1. **भस्मांकुर : स्वरूप**
2. **खंडकाव्य के तत्वों के आधार पर 'भस्मांकुर' का मूल्यांकन**

   कथावस्तु

   चरित्रचित्रण

   संवाद

   देश-काल-वातावरण

भाषाशैली

रस़वर्णन

उद्देश्य

3. **भूमिजा - स्वरूप**

4. **खंडकाव्य के तत्वों के आधार पर 'भूमिजा' का मूल्यांकन**

कथावस्तु

चरित्र-चित्रण

संवाद

देश-काल-वातावरण

भाषाशैली

रस़-वर्णन

उद्देश्य

ई) **निष्कर्ष**

* * *

अ) 1. काव्य का स्वरूप :-

काव्य साहित्य की प्रमुख विधा है। काव्य का स्वरूप अत्यंत विस्तृत होने के कारण इसे लक्षण की सीमा में आबद्ध करने का प्रयत्न पूर्णता सक्षमता प्रदान करने में असमर्थ है। व्यवहार में 'काव्य' शब्द का प्रयोग पटाबद्ध रचना के लिए किया जाता है। कवि की सृजनात्मक वृत्ति, कल्पनाशीलता तथा रागात्मकता काव्य में सौंदर्य की सृष्टि करती है। "विज्ञान की उन्नत दिशा में भी जीवन के लिए काव्य की वही उपयोगिता है जो शहर के पक्के मकानों में रहकर भी प्रकृति की होती है।"[1] काव्य का विषय निष्पक्षतः जीवन ही है। काव्य जीवन की एक-एक अनुभूति से सीधे तौर पर जुड़े होने के कारण स्थूल सीमाओं में बाँधने की वस्तु नहीं है।

काव्य को कुछ लोग असभ्य अवस्था से संबंधित मानते हैं। वे यह प्रश्न उठाते हैं कि ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास होता जाता है, त्यों-त्यों काव्य का ह्रास होता जा रहा है। जितने बड़े-बड़े महाकाव्य, प्रबल मंथनकारी भावनाओं से युक्त काव्य हमें पूर्ववर्ती युग में मिलते हैं, उतने आज नहीं। न आज उतने बड़े काव्यग्रंथ लिखे जाते हैं और न वैसे पढ़े जाते हैं। वास्तव में इसका कारण अति बौद्धिक विकास और जीवन में भाव की अपेक्षा बुद्धि को अधिक महत्व देने के कारण व्यस्त जीवन की अवस्था है। आज हम इतने व्यस्त हैं कि न तो हमें व्यापक काव्यरचना करने का समय है, न उसे पढ़ने की फुरसत।[2] इसलिए आधुनिक साहित्य में जीवन संघर्ष और व्यस्तता के परिणामस्वरूप स्फुट कविता, लघुकाव्य, मुक्तक आदि पनप रहे हैं।

संक्षेप में जो भावपूर्ण रमणीय रचना अपनी शब्दशक्ति और रमणीयता से मन को प्रभावित कर उसमें अलौकिक आनंद का संचार करे, वह काव्य है।

2. काव्य की परिभाषा :-

काव्य का स्वरूप विस्तृत होने के कारण उसे परिभाषाबद्ध करना अपेक्षाकृत कठिन काम है। काव्य जीवन की अनुभूति है। अनुभूति के इन क्षणों को परिभाषाबद्ध करने का प्रयास विभिन्न आचार्यों ने अपने-अपने ढंग से किया है। "जीवन की बिखरी अनुभूतियों को समेट कर जब कवि उन्हें शब्द और अर्थ के माध्यम से एक कलापूर्ण रूप देता है, तभी काव्य का जन्म होता है। ऐसा तभी होता है जब कवि अभिव्यक्ति के लिए व्यग्र हो उठता है।"[3]

आचार्य मम्मट (संस्कृत आचार्य) ने काव्य को इसप्रकार परिभाषित किया है -

"तददोषौ शब्दार्थो सगुणावनलंकृति पुनःक्वापि"[4]

आचार्य मम्मट ने उस रचना को काव्य कहा है जो दोषरहित और गुणसंपन्न हो तथा जिसमें कहीं-कहीं अलंकार न भी हो।

आचार्य विश्वनाथ ने काव्य की परिभाषा इस प्रकार की है -

"वाक्यं रसात्मक काव्यम्"[5]

आचार्य विश्वनाथ ने रसयुक्त वाक्य को काव्य कहा है। काव्य वह है जिस रचना में रस हो।

अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि 'वर्डसवर्थ' का विचार है कि, "कविता प्रबल अनुभूतियों का सहज उद्रेक है, जिसका स्रोत शांति के समय स्मृत मनोवेगों से फूटता है।" [6]

यह परिभाषा भावानुभूति और अभिव्यक्ति की प्रतिक्रिया को स्पष्ट करती है।

कॉलरिज ने कविता के विषय में लिखा है - "सर्वोत्तम शब्दों का सर्वोत्तम क्रम कविता है।" [7]

इस परिभाषा में कवि ने अभिव्यक्ति को प्रधानता दी है।

हिंदी विद्वान आ. रामचंद्र शुक्ल काव्य में सत्य की अवहेलना न करते हुए रागात्मक तत्व को महत्व देते हैं। उन्होंने अपना मत इसप्रकार व्यक्त किया है "जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्दविधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।" [8]

डॉ. श्यामसुंदर दास ने काव्य के विषय में अपना विचार इसप्रकार व्यक्त किया है - "काव्य वह है जो हृदय में अलौकिक आनंद या चमत्कार की सृष्टि करें।" [9]

आ. महावीरप्रसाद द्विवेदी जी के अनुसार, "कविता प्रभावशाली रचना है जो पाठक या श्रोता के मन पर आनंददायी प्रभाव डालती है।... मनोभाव शब्दों का रूप धारण करते हैं। वहीं कविता है, चाहे वह पद्यात्मक हो या गद्यात्मक।... अंतःकरण की वृत्तियों के चित्र का नाम कविता है।" [10]

कवि जयशंकर प्रसाद ने काव्य की परिभाषा इसप्रकार की है - "काव्य आत्मा की संकल्पात्मक अनुभूति है, जिसका संबंध विश्लेषण-विकल्प या विज्ञान से नहीं है, वह एक श्रेयमयी प्रेय रचनात्मक ज्ञानधारा है।" [11]

डॉ. रामकुमार वर्मा ने काव्य के विषय में विचार इसप्रकार व्यक्त किए हैं - "आत्मा की गूढ़ और छिपी हुई सौंदर्यराशि का भावना के आलोक से प्रकाशित हो उठना ही कविता है।" [12]

भगीरथ मिश्र ने लिखा है, "कविता कवि-विशेष की भावनाओं का चित्रण है और वह चित्रण इतना ठीक है कि उसमें वैसी ही भावनाएँ किसी दूसरे के हृदय में आविर्भूत होती है।" [13]

रामधारी सिंह 'दिनकर' जी के विचारानुसार, "कविता वह है जो अकथ्य को कथ्य बनाने का प्रयास करे।" [14]

डॉ. शकुंतला दूबे ने काव्य की परिभाषा इस प्रकार की है - "कवि की अनुभूति जब अभिव्यक्ति बन जाती है तब काव्य को जन्म मिलता है।" [15] एक स्थान पर दूबे जी ने शुद्ध अनुभव के उचित विधि से प्रकाशन को काव्य कहा है - "मनुष्य अनुभवशील प्राणी है। उसका अनुभव दो प्रकार का होता है - एक तो सामान्य एवं व्यावहारिक और दूसरा शुद्ध, सहजसुंदर अनुभव। इसी दूसरे अनुभव का उचित विधि से प्रकाशन काव्य कहलाता है।" [16]

डॉ. गुलाबराय ने काव्य की परिभाषा गंभीरता के साथ प्रस्तुत की है - "काव्य संसार के प्रति कवि की भावप्रधान (किंतु क्षुद्र वैयक्तिक संबंधों से मुक्त) मानसिक प्रतिक्रियाओं, कल्पना के ढाँचे में ढली हुई, श्रेय की प्रेमरूपा प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति है।" [17]

15490

उपरोक्त सभी परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि काव्य कवि की अभिव्यक्ति है। कवि अपनी अनुभूतियों को वैयक्तिक धरातल पर जब अभिव्यक्त करता है, तब गीत बनते हैं। जब अभिव्यक्ति के लिए अन्य तत्वों को स्वीकारता है, अपनी अनुश्रूतियों के साथ आख्यानों का स्वीकार करता है, तब प्रबंधकाव्य का निर्माण होता है। कल्पना और सत्य दोनों के संमिश्रण से युक्त, कवि के अमूर्त भावों और विचारों का लयात्मक, मूर्त रूप काव्य कहा जा सकता है।

3. काव्य का वर्गीकरण :-

काव्य मूलतः आत्मा को अभिव्यक्ति है। किंतु अभिव्यंजना की भिन्नता के कारण काव्य के विभिन्न रूप निर्माण हो गए हैं। काव्य की मूल संवेदना अखंड होकर भी काव्य साहित्य का सांगोपांग अध्ययन के लिए उसे वर्गीकृत करके उसके प्रत्येक वर्ग का समुचित विश्लेषण-विवेचन करना पड़ता है। इसी कारण काव्यशास्त्र के आचार्य काव्य के उद्‌भव काल से ही काव्य को वर्गीकृत करते आए हैं।

संस्कृत आचार्य 'भामह' ने काव्य का वर्गीकरण दो आधारों पर किया है। अ) प्रतिपाद्‌य वस्तु के आधार पर, आ) बंध के आधार पर।[18]

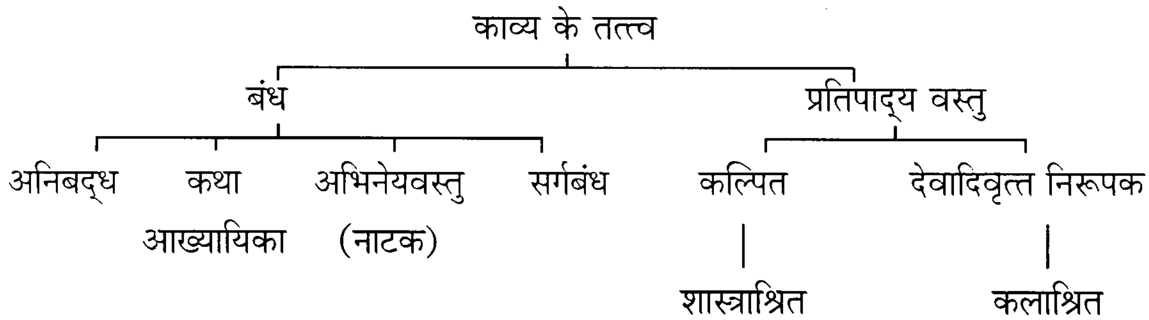

आ. भामह के उपरोक्त विवेचन में गद्‌य-पद्‌य का पृथक विभाजन नहीं है। इसका मतलब उस समय तक साहित्य में गद्‌य-पद्‌य का पृथक्करण ही नहीं हुआ था। उपरोक्त वर्गीकरण में स्थूलता है; क्योंकि वास्तव में काव्य के तत्व भामह द्‌वारा दी गई संख्या से कही अधिक हैं।

आचार्य भामह के उपरांत आचार्य दण्डी ने काव्यभेद का विवेचन किया है। उन्होंने काव्य के वर्गीकरण के बदले काव्यशरीर का वर्गीकरण किया है। इष्ट अर्थ से विभूषित पदसमूह को ही उन्होंने काव्यशरीर की संज्ञा दी है।[19]

गद्‌य, पद्‌य और मिश्र काव्यशरीर के ये तीन भेद उन्होंने माने हैं। पद्‌य को उन्होंने जाति और वृत्त छंद में पुनर्विभक्त किया है और सर्गबद्‌ध के मुक्तक, कुलक, कोश, संघात आदि रूप बताए गए हैं।

> "मुक्तकं कुलकं कोशः संघात इति तादृशः।
> सर्गबन्धांशरूपत्वादनुक्तः पद्‌यविस्तारः।।"[20]

आचार्य रुद्रट ने सर्वप्रथम काव्य को काव्य, कथा, आख्यायिका आदि वर्गों में बाँटा और उन्हें पुनः उत्पाद्य, अनुत्पाद्य तथा बृहत-लघु दो-दो विभागों में विभक्त किया।

"सन्ति द्विधा प्रबन्धाः काव्यकथाख्यायिकादयः काव्ये।

उत्पाद्यानुत्पाद्या महल्लघुत्वेन भुयोऽपि।।"[21]

युरोप के समीक्षकों ने (पाश्चात्य आचार्यों ने) व्यक्ति और संसार को पृथक करके काव्य के दो भेद किए हैं। एक विषयीगत जिसमें कवि को प्रधानता मिलती है और दूसरा विषयगत जिसमें कवि के अतिरिक्त शेष सृष्टि को मुख्यता दी जाती है।"[22]

पहले प्रकार के काव्य को प्रगीत या भावप्रधान काव्य कहा जाता है। दूसरे प्रकार के काव्य को प्रकथनात्मक कहा जाता है जिसके प्रायः महाकाव्य और खंडकाव्य उपभेद हैं। किंतु पाश्चात्य देशों में खंडकाव्य जैसा कोई विशेष उपभेद न होकर महाकाव्य ही प्रमुख रहता है।

हिंदी आचार्यों के काव्य वर्गीकरण पर संस्कृत तथा पाश्चात्य आचार्यों के वर्गीकरण का प्रभाव स्पष्ट है। हिंदी साहित्य में स्वतंत्र रूप से काव्यरूपों को वर्गबद्ध करने वालों का अभाव-सा दिखाई देता है।

पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित डॉ. श्यामसुंदर दास ने काव्य के दो भेद किए हैं - व्यक्तित्वप्रधान और विषयप्रधान।[23]

आ. विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने शैली, अर्थ, बंध के आधार पर काव्य का वर्गीकरण किया है।[24] परंतु इन तीनों को काव्य-विभाजन का अलग-अलग आधार मानना युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता। शैली और बंध की दृष्टि से काव्य के जितने भेद होंगे, उनमें से प्रत्येक अर्थ की दृष्टि से उत्तम, मध्यम, अधम में से किसी एक कोटी का हो सकता है।

- काव्य
  - शैली
    - गद्य
    - पद्य
    - मिश्र
  - अर्थ
    - उत्तम
    - मध्यम
    - अधम
  - बंध
    - प्रबंध
      - महाकाव्य
      - खंडकाव्य
      - एकार्थकाव्य
    - मुक्तक

डॉ. शकुंतला दुबे ने काव्यरूपों का विभाजन प्रबंध, अबंध और बंधाबंध इन तीन वर्गों में किया हैं। उनके वर्गीकरण को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है।[25]

नवीन काव्यवर्ग बंधाबंध के विषय में दूबे जी का विचार इसप्रकार अभिव्यक्त हुआ है - "ऐसे काव्यरूप में प्रबंध और अबंध दोनों ही वर्गों के अन्यान्य भेदों की कुछ-न-कुछ विशेषताएँ अवश्य मिलती हैं। परंतु न तो ये प्रबंध काव्य की भाँति अति वर्णनप्रधान होते हैं और न अबंध काव्य की

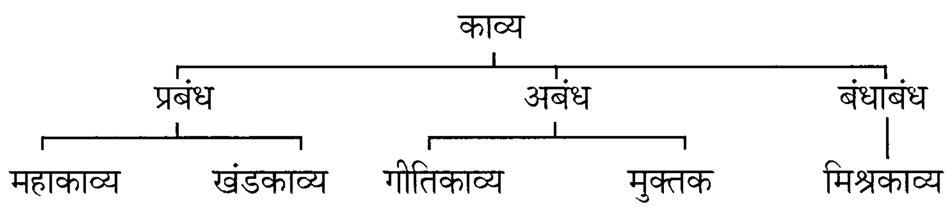

भाँति ये बिलकुल पद्यांतर-निरपेक्ष ही होते हैं। प्रबंध की शृंखलाबद्ध एवं अबंध काव्य के भेदों की भावात्मकता दोनों ही यहाँ मिलकर एकरूप हो जाती हैं।" [26]

बाबू गुलाबराय ने काव्य का वर्गीकरण इसप्रकार किया है। [27]

पूर्ववर्ती आचार्यों को अपेक्षा गुलाबराय जी का यह वर्गीकरण अधिक संतुलित प्रतीत होता है। बाबू गुलाबराय एक समर्थ समालोचक माने जाते हैं। उन्होंने बंध की दृष्टि से काव्य के दो भेद किए हैं। प्रबंध के भी फिर से दो भेद किए हैं। महाकाव्य और खंडकाव्य।

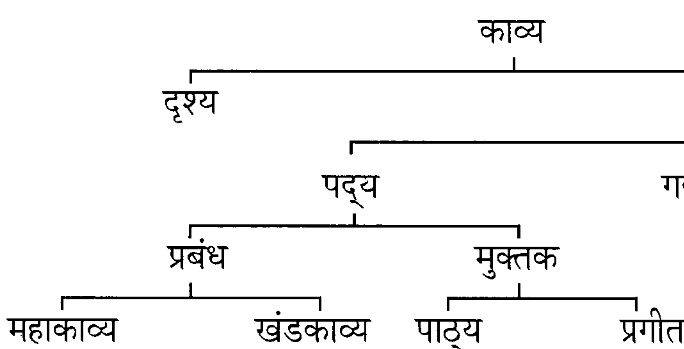

डॉ. भगीरथ मिश्र ने 'काव्यशास्त्र' में काव्य का वर्गीकरण इसप्रकार किया है। [28]

डॉ. निर्मला जैन ने संस्कृत आचार्यों द्वारा उल्लेखित एवं विवेचित काव्यरूपों को बंध के आधार पर इसप्रकार वर्गीकृत किया है। [29]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हमें ज्ञात होता है कि संस्कृत तथा हिंदी आचार्यों ने साधारणतः

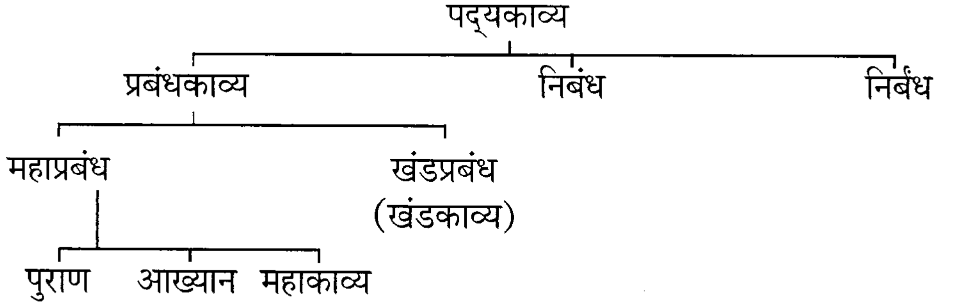

बंध की दृष्टि से काव्य का वर्गीकरण करते समय प्रबंध तथा मुक्तक में वर्गीकृत किया है और प्रबंध के महाकाव्य और खंडकाव्य दो प्रकार प्रस्तुत किए हैं।

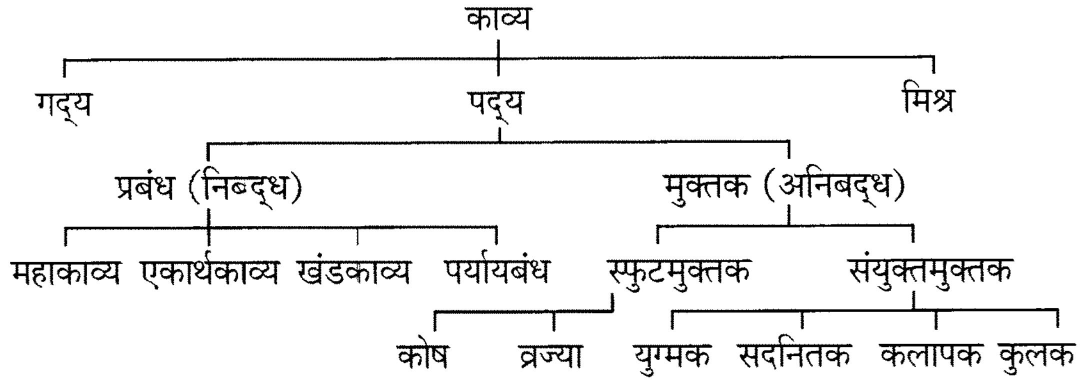

4. प्रबंधकाव्य - स्वरूप :-

'प्रबंध' का सामान्यतः अर्थ है - बंधसहित। अर्थात जिस काव्य में किसी वस्तु का वर्णन शृंखलाबद्ध हो। 'बंध' से तात्पर्य किसी कथा से है। शृंखला की कड़ी की तरह प्रबंध काव्य की कथाएँ एक-दूसरी से संबंधित होती है। एक कड़ी के टूटने पर जिस तरह शृंखला खंडित हो जाती है, उसी तरह एक घटना छूट जाने पर संपूर्ण प्रबंध की धारा बिखर जाती है। प्रबंध के लिए कथानक अनिवार्य तत्व होता है। कथाप्रवाह को आगे बढ़ाने के लिए प्रबंध में क्रमबद्ध रूप से घटनाएँ एक के बाद एक आती ही हैं। इसी कारण प्रबंधकाव्य को उठाकर इच्छानुसार कहीं से भी प्रारंभ कर देने से संपूर्ण कथा को समझना कठिन होता है। संपूर्ण कथा को शुरू से अंत तक पढ़ने पर ही हम उसका रसास्वाद ले सकते हैं। इस बारे में डॉ. शकुंतला दुबे जी का मंतव्य इसप्रकार है "ऐसे काव्य में कोई प्रचलित अथवा अप्रचलित या काल्पनिक कथा का वर्णन शृंखलाबद्ध रूप से आद्यंत होता है।" [30]

प्रबंधकाव्य विषयप्रधान होता है और उसकी यह विषयप्रधानता उसमें वर्णनात्मक तत्व को अधिक ला देती है। वस्तुवर्णन में कहीं भी कवि की नीजी व्यक्तित्व नहीं झलकता। वह जो भी कहना चाहता है, पात्रों के द्वारा अथवा वर्णनात्मक शैली में कहता चलता है। डॉ. दुबे जी के विचारानुसार, "प्रबंधकाव्य में कोई कथा रहती है और वह वर्णनात्मक अधिक रहता है।" [31]

घटनाओं के अनुरूप कथा को कई भागों में विभाजित किया जाता हैं, जिन्हें 'सर्ग' नाम दिया जाता है। प्रबंध को दो भागों में विभाजित कर दिया जाता है। "पहला भेद प्रबंधकाव्य का वह है जिसमें कवि अपना एक आदर्श लेकर जीवन के संपूर्ण अंगों का सर्गबद्ध रूप में वर्णन करता है। इसमें युग को कोई नवीन संदेश अवश्य दिया जाता है, इसे महाकाव्य कहते हैं। दूसरा प्रकार प्रबंध काव्य का वह है जहाँ कवि जीवन के किसी एक खंड या अंश को लेकर उसका क्रमबद्ध रूप में वर्णन करता है, इसे खंडकाव्य कहते हैं।" [32]

विद्वानों ने प्रायः प्रबंधकाव्य को 'महाकाव्य' के अर्थ में लिया है। यह उनके द्वारा प्रबंधकाव्य के दिए गए लक्षणों से सिद्ध है। आ. रामचंद्र शुक्ल ने 'जायसी ग्रंथावली' की भूमिका में 'प्रबंधकाव्य' शब्द का प्रयोग महाकाव्य के ही अर्थ में किया है। उन्होंने प्रबंधकाव्य में मानव जीवन

का संपूर्ण दृश्य माना है।[33] मानव जीवन का यह पूर्ण दृश्य निश्चय ही महाकाव्य में ही संभव है लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि प्रबंधकाव्य महाकाव्य के लिए रूढ़ हो गया। इस संबंध में डॉ. तिवारी जी का मत द्रष्टव्य है - "खंडकाव्य और काव्य (एकार्थ काव्य) में भी तो प्रबंधत्व पूर्णरूपेण रहता ही है। अतः 'प्रबंध' के शाब्दिक अर्थ को ध्यान में रखते हुए प्रबंधकाव्य के अंतर्गत महाकाव्य, काव्य (एकार्थ काव्य) और खंडकाव्य तीनों को समेटना संगत प्रतीत होता है।"[34]

प्रायः साहित्य में प्रबंध काव्य का बड़ा महत्व रहा है। आधुनिक युग में प्रबंध काव्य रचना में थोड़ी न्यूनता आ रही है लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि उसका महत्व ही समाप्त हो गया हो। जीवन की जिस व्यापकता का समावेश गीत अथवा मुक्तक में असंभव है, वह प्रबंध काव्य में सहज संभव है।

5. प्रबंधकाव्य के उपभेद :-

संस्कृत काव्यशास्त्र में आ. रुद्रट ने प्रबंध काव्य को महत् और लघु तथा उत्पाद्य और अनुत्पाद्य इन चार प्रकारों में विभाजित किया।[35] इनमें से आकार की दृष्टि से महत् और लघु और वस्तु की दृष्टि से उत्पाद्य और अनुत्पाद्य दो भेद किए गए हैं।

रुद्रट के प्रथम विभाजन को ही आ. विश्वनाथ ने सूक्ष्मतर करते हुए महाकाव्य, काव्य, खंडकाव्य इन तीन प्रकारों में विभाजित किया और अपने समय तक के रचित साहित्य की सारी प्रबंधकृतियों का इसमें समावेश किया।[36]

प्रबंधकाव्य के वर्गीकरण में हिंदी के विद्वान प्रायः संस्कृत आचार्यों के अनुकर्ता रहे हैं। अधिकांश आचार्यों ने आ. विश्वनाथ के वर्गीकरण को थोडा-सा संशोधित कर दुहराया है। विश्वनाथ के द्वारा वर्गीकृत महाकाव्य और खंडकाव्य के बीच का 'काव्य' बहिष्कृत कर दिया। यद्यपि उस प्रकार की काव्यकृति का हमारे यहाँ अभाव नहीं रहा है। आ. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने प्रबंधकाव्य के वर्गीकरण में अवश्य ही उसका उल्लेख करते हुए, उसकी प्रतिपाद्य वस्तु को देखते हुए उसे एकार्थ काव्य की संज्ञा दी।[37]

डॉ. भगीरथ मिश्र ने प्रबंध के प्रथमतः दो वर्ग किए। महाप्रबंध और खंडप्रबंध या खंडकाव्य और महाप्रबंध के पुनः तीन भेद किए - पुराण, आख्यान और महाकाव्य।[38]

डॉ. गुलाबराय ने भी बंध की दृष्टि से काव्य के दो भेद किए हैं। प्रबंधकाव्य और मुक्तककाव्य। इन्होंने आगे चलकर प्रबंध के भी दो भेद किए है - महाकाव्य और खंडकाव्य। अपने इस वर्गीकरण को उन्होंने इसप्रकार स्पष्ट किया है - "महाकाव्य में आकार की विशालता के साथ भावों की उदात्तता और विशालता रही है जबकि खंडकाव्य में एक ही घटना को मुख्यता दी जाकर उसमें जीवन के किसी एक पहलू की झाँकी-सी मिल जाती है।"[39]

डॉ. शकुंतला दूबे के अनुसार, "प्रबंधकाव्य में एक ओर तो महाकाव्य आता है और दूसरी ओर खंडकाव्य।"[40] दूबे जी ने आगे चलकर इसपर विस्तार से लिखा है, "पहला भेद प्रबंधकाव्य का वह

है जिसमें कवि अपना एक आदर्श लेकर जीवन के संपूर्ण अंगों का सर्गबद्ध रूप में वर्णन करता है। इसमें युग को कोई नवीन संदेश अवश्य दिया जाता है। इसे महाकाव्य कहते हैं। दूसरा प्रकार प्रबंधकाव्य का वह है जहाँ कवि जीवन के किसी एक खंड या अंश को लेकर उसका क्रमबद्ध रूप में वर्णन करता है, इसे खंडकाव्य कहते हैं।"[41]

6. खंडकाव्य का स्वरूप :-

काव्य का आनंद उसके श्रवण या दर्शन से किया जाता है। इस दृष्टि से उसके श्रव्यकाव्य और दृश्यकाव्य दो भेद किए जाते हैं। जिस काव्य का आनंद पढ़कर या सुनकर लिया जाता है उसे श्रव्यकाव्य कहा जाता है। श्रव्यकाव्य के शैली के आधार पर तीन भेद किए जाते हैं - गद्य, पद्य तथा चंपू। पद्यकाव्य के बंध की दृष्टि से दो भेद किए जाते हैं - प्रबंधकाव्य और मुक्तक। प्रबंधकाव्य के फिर से दो भेद किए जाते हैं जिसके अंतर्गत महाकाव्य और खंडकाव्य का समावेश होता है। महाकाव्य संपूर्ण जीवन का चित्रण करने वाला तो खंडकाव्य जीवन के एक ही पक्ष को लेकर चलने वाला काव्य है जिसमें जीवन के एक ही घटना को मुख्यता दी जाती है।

खंडकाव्य प्रलंबकालाश्रयी क्षणों की अनुभूति की अभिव्यंजना है। जीवन के ये लंबित क्षण जीवन के विस्तार के अनुरूप कभी खंडकाव्य को जन्म देते हैं, कभी महाकाव्य को। गद्य क्षेत्र में जो अंतर उपन्यास और कहानी में है, वैसा ही भेद महाकाव्य और खंडकाव्य में पाया जाता है। कहानी में जीवन के किसी एक मर्मस्पर्शी पक्ष की अनुभूति अभिव्यंजित होती है, तो उपन्यास संपूर्ण जीवन की अनुभूति की अभिव्यंजना है। एक का क्षेत्र छोटा होता हुआ भी पूर्ण है, तो दूसरा विस्तृत होकर अपने में पूर्ण है। ठीक इसी प्रकार खंडकाव्य यद्यपि जीवन के एक ही अंग को लेकर चलता है तथापि वह अपने में पूर्ण होता है और उसकी अनुभूति भी पूर्ण होती है। जिस प्रकार कहानी और उपन्यास का भेद आकार का ही न होकर प्रकार का भी होता है और जिस तरह उपन्यास का छोटा रूप न तो कहानी बन सकता है, न कहानी का बृहदाकार उपन्यास ही, उसी प्रकार महाकाव्य का एक अंश जिसमें जीवन की एक झलकभर मिल रही हो, अलग रखकर खंडकाव्य कदापि नहीं बन पाता है।

खंडकाव्यकार, महाकाव्यकार की भाँति अपनी प्रतिभा के बल पर युग के बीच से किसी महत् चरित्र को ढूँढ़कर, युग को कोई महान संदेश नहीं देता बल्कि वह किसी पौराणिक या इतिहास प्रसिद्ध चरित्र के जीवनांश को या कभी कल्पनाद्वारा प्रतिष्ठित चरित्र के जीवन खंड को लेकर काव्य-निर्माण करता है। यही कारण है कि खंडकाव्य उस कहानी के समान है जिसमें एक ही घटना का विस्तार आद्यंत किया जाता है।

खंडकाव्य वह वर्णनात्मक प्रबंधकाव्य है, जिसमें कवि धीरे-धीरे कथा का आरंभ और विकास करता है। उसमें एक प्रमुख कथा ही शुरू से अंत तक चलती है। प्रासंगिक कथाओं का प्रायः अभाव ही रहता है, कभी-कभी छोटी घटनाएँ प्रासंगिक रूप में उसमें अवश्य रहती हैं।

खंडकाव्य के स्वरूप के बारे में निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि वह प्रबंधकाव्य का एक प्रकार है, जिसमें मानवजीवन के किसी मार्मिक पक्ष की अनुभूति की अभिव्यंजना काव्यात्मक रूप में होती है।[42]

7. खंडकाव्य की परिभाषा :-

संस्कृत में खंडकाव्य का स्वरूप स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया। पूर्ववर्ति संस्कृत आचार्यों ने खंडकाव्य के स्वरूप निर्धारण में उदासीनता ही दिखलाई। फिर भी खंडकाव्य के बारे में कुछ विद्वानों की धारणा इसप्रकार है -

आ. विश्वनाथ साहित्यदर्पण में खंडकाव्य के बारे में लिखते हैं -

"भाषा विभाषा नियमात्काव्यं सर्गसमुज्जितम्
एकार्थ प्रवणै पद्यः संधि समग्रवर्जितम्।।
खंडकाव्य भवेत्काव्यस्यैक देशानुसारिच।"[43]

अर्थात बिना सर्गों के, किसी भाषा में लिखे गए भाव या उद्देश को लेकर चलने वाले छंदों में कथा संग की संधि आदि न्यिमों का ध्यान न रखते हुए महाकाव्य जैसा वैविध्य एवं विस्तार न रखने वाले प्रबंध के किसी एक अंग को लेकर लिखे गए खंडकाव्य होते हैं।

डॉ. भगीरथ मिश्र जी 'काव्यशास्त्र' में लिखते हैं, "खंडकाव्य के लक्षणों पर अधिक विस्तार से विचार नहीं किया गया है, परंतु इसमें प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें कथावस्तु संपूर्ण न होकर उसका एक अंश होतो है।"[44] अर्थात कथावस्तु के किसी अंश को लेकर ही खंडकाव्यकार खंडकाव्य का निर्माण करता है।

मिश्र जी अन्य एक जगह पर खंडकाव्य के बारे में अपना विचार इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं - "खंडकाव्य वह प्रबंधकाव्य है जिसमें किसी भी पुरुष के जीवन का कोई अंश ही वर्णित होता है, पूरी जीवनगाथा नहीं। इसमें महाकाव्य के सभी अंग न रहकर एकाध अंग ही रहता है।"[45]

डॉ. शकुंतला दूबे जी के खंडकाव्य के बारे में विचार है कि, "खंडकाव्य के खंड शब्द का अर्थ यह कदापि नहीं कि वह बिखरा हुआ अथवा किसी महाकाव्य का एक खंड है, प्रत्युत यह खंड शब्द उस अनुभूति के स्वरूप को ओर संकेत करता है जिसमें जीवन अपने संपूर्ण रूप में कवि को न प्रभावित कर आंशिक रूप या खंड रूप में प्रभावित करता है।"[46]

खंडकाव्य के बारे में डॉ. गुलाबराय लिखते हैं, "खंडकाव्य में एक ही घटना को मुख्यता दी जाकर उसमें जीवन के किसी एक पहलू की झाँकी-सी मिल जाती है।"[47] आगे गुलाबराय लिखते हैं - "खंडकाव्य में प्रबंधकाव्य-सा तारतम्य तो रहता है किंतु महाकाव्य की अपेक्षा उसका क्षेत्र सीमित होता है। उसमें जीवन की वह अनेकरूपता नहीं रहती जो कि महाकाव्य में होती है।"[48]

अर्थात खंडकाव्य प्रबंधकाव्य का ऐसा भेद है जिसमें जीवन के सीमित क्षेत्र पर प्रकाश डाला जाता है।

डॉ. सरनामसिंह शर्मा जी का खंडकाव्य के बारे में इस प्रकार मत है, "खंडकाव्य से जीवन की पूर्णता अभिव्यक्त नहीं होती। उसकी रचना के लिए कोई एक घटना अथवा संवेदना मात्र पर्याप्त होती है।" [49]

"वह काव्य जो मात्रा में महाकाव्य से छोटा परंतु गुणों में उससे कथमपि शून्य न हो खंडकाव्य कहलाता है... महाकाव्य विषयप्रधान होता है परंतु खंडकाव्य मुख्य विषयीप्रधान होता है जिसमें लेखक कथानक के स्थूल ढाँचे में अपने वैयक्तिक विचारों को प्रसंगानुसार वर्णन करता है।" [50]

"मोटे ढंग से यह कहा जा सकता है कि खंडकाव्य एक ऐसा पद्यबद्ध कथाकाव्य है जिसके कथानक में इस प्रकार की एकात्मक अन्विति हो कि उसमें अप्रासंगिक कथाएँ सामान्यतया अंतर्मुक्त न हो सके, कथा में एकांगिता साहित्यदर्पण के शब्दों में एकदेशीयता हो, तथा कथाविन्यास क्षेत्र में क्रम, आरंभ, चममसीमा और निश्चित उद्देश्य में परिणति हो।" [51]

डॉ. हरदेव बाहरी के शब्दों में, "खंडकाव्य में एक ही घटना होती है और उसमें मानव जीवन के एक ही पहलू पर प्रकाश डाला जाता है। उसमें महाकाव्य के अन्य गुण पूर्णतया विद्यमान रहते हैं।" [52]

डॉ. कमलाकांत पाठक ने खंडकाव्य को इसप्रकार परिभाषित किया है - "जिस काव्य में एक देश या अंश का अर्थात एक घटना का अनुसरण किया जाए अर्थात जिस रचना में जीवन के अंग विशेष का निरूपण हो, वह खंडकाव्य है।... संक्षेप में खंडकाव्य लघुकथाकाव्य होता है, जिसमें जीवन की व्यापकता नहीं होती, कथानक का विस्तार नहीं होता, चरित्र की विशाल भूमिका नहीं दी जा सकती और वर्णनों को वैविध्यपूर्ण नहीं बनाया जा सकता। उसका कथानक एक प्रमुख घटना का ही अनुसरण करता है।" [53]

खंडकाव्य के उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि खंडकाव्य प्रबंधकाव्य का एक भेद है जिसमें मानव-जीवन के किसी एक पक्ष की अनुभूति का अभिव्यंजन काव्यद्वारा किया जाता है।

8. खंडकाव्य का वर्गीकरण :-

संस्कृत काव्यशास्त्र में खंडकाव्य के वर्गीकरण का कोई संकेत नहीं है परंतु आधुनिक हिंदी आचार्यों ने खंडकाव्य के वर्गीकरण को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

डॉ. भगीरथ मिश्र ने अपने प्रख्यात ग्रंथ 'काव्यशास्त्र' में छंदयोजना के आधार पर खंडकाव्य के दो वर्ग किए। 1. एकार्थ खंडकाव्य और अनेकार्थ खंडकाव्य। जिस खंडकाव्य में आदिय से अंत तक एक ही छंद का प्रयोग होता है उसे एकार्थ काव्य कहते हैं तथा जिसमें अनेक छंदों का प्रयोग होता है, वह अनेकार्थ काव्य है। उन्होंने अपना मत इसप्रकार व्यक्त किया है - "प्रबंधकाव्य का दूसरा भेद खंडकाव्य या खंडप्रबंध है।... खंडकाव्य के दो भेद किए जा सकते हैं - एक संघात अथवा एकार्थ खंडकाव्य, जिसमें एक प्रकार के छंद में ही एक घटना या दृश्य का वर्णन किया जा

सकता है और दूसरा अनेकार्थ खंडकाव्य, जिसमें अनेक प्रकार के छंदों में विविध भावों के साथ जीवन के एक अंश का चित्रण होता है।"[54]

प्रस्तुत छंदों के आधार पर किया हुआ वर्गीकरण महत्वपूर्ण होते हुए भी वर्गीकृत रूप के लिए दिए गए नाम की सार्थकता संदिग्ध है। इससे वास्तविक अर्थबोध में कठिनाई आ जाती है।

डॉ. निर्मला जैन ने खंडकाव्य का विभाजन करते हुए लिखा है, "आधुनिककाल के लिखे गए खंडकाव्यों को रूप-विधान की दृष्टि से दो प्रमुख वर्गों में बाँटा जा सकता है। - महाकाव्यात्मक खंडकाव्य तथा लघुप्रबंधात्मक खंडकाव्य।"[55]

इस प्रकार इन्होंने खंडकाव्यों को दो वर्गों में विभाजित किया है। इन्होंने दोनों भेदों के विषय में लिखा है - "प्रथम वर्ग के अंतर्गत वे रचनाएँ आती हैं जिनका रूपनिर्माण महाकाव्य के ढंग पर किया गया है। दूसरे शब्दों में जिनको अन्य विषयादि संबंधी सीमाओं के कारण महाकाव्य नहीं स्वीकार किया जाता, परंतु केवल रूपविधा की दृष्टि से जिनका विस्तार महाकाव्यानुरूप है। दूसरे प्रकार के खंडकाव्य हमने वे माने हैं जिनका काव्यरूप महाकाव्य के समान तो नहीं परंतु जो किसी लंबी प्रबंधात्मक कविता या काव्यनिबंध से भिन्न मध्यम आकार की प्रबंध रचनाएँ हैं। जिनकी शैली विषय की आवश्यकता के अनुरूप समाख्यानक, वर्णनात्मक, विचारात्मक, विश्लेषणात्मक या भावात्मक है। इनके अतिरिक्त एक तीसरा प्रकार उन रचनाओं का है जिनकी गणना उनकी प्रबंधात्मकता और कथातत्व को देखकर खंडकाव्यों में की जाती है। परंतु वस्तुतः उनमें एक कथा खंड न लेकर प्रसंग मात्र को ग्रहण किया गया है। उनमें खंडकथा न होकर आख्यानमात्र है, जिनमें खंडकाव्य की अपनी सीमा के अंतर्गत विद्यमानपूर्णता का अभाव है।"[56]

डॉ. निर्मला जैन ने महाकाव्यात्मक खंडकाव्य को रूपविधा की दृष्टि से महाकाव्य के समरूप माना है, जो महाकाव्य की परिभाषा पर पूर्णरूपेण खरा न उतरने से उसे खंडकाव्य मान लिया गया है।

डॉ. जैन ने लघुप्रबंधात्मक खंडकाव्य को फिर से दो भागों में विभक्त किया है। "दूसरे अर्थात अपेक्षाकृत सीमित आकार वाले खंडकाव्यों में भी बंध की दृष्टि से दो प्रकार की रचनाएँ हुईं। (क) सर्गबद्ध (ख) सर्गविहीन।"[57] एक स्थान पर डॉ. जैन ने खंडकाव्यों के अन्य रूपों पर भी दृष्टिपात किया है। "(1) वे खंडकाव्य जिनमें प्रख्यात कथानक ग्रहण किया गया है, तथा जिनमें कार्यव्यापार का घटनात्मक वस्तुरूप प्रधान है। (2) वे खंडकाव्य जिनकी रचना किसी सामाजिक समस्या अथवा अन्य उद्देश्य को लेकर की गई है तथा काल्पनिक कथा को अपनाकर कवि ने उसके माध्यम से अपना उद्देश्य व्यक्त किया है।"[58]

इस प्रकार डॉ. निर्मला जैन ने गवेषणापूर्ण ढंग से खंडकाव्यों का वर्गीकरण किया है।

डॉ. शकुंतला दुबे ने खंडकाव्य के प्रमुख दो भेद किए हैं। एक लोक से उद्भुत लोकरंजन के लक्ष्य से निर्मित और दूसरा देशी-विदेशी काव्यपरंपरा से उद्भुत साहित्यमर्मज्ञ, सहृदय पाठक के

लिए निर्मित। पहले प्रकार के खंडकाव्यों का पुनः लोकदृष्टिप्रधान और व्यक्तित्वप्रधान ऐसे दो भेद किए हैं। लोकदृष्टिप्रधान में कुछ वीरभावात्मक तथा कुछ प्रेमप्रधान खंडकाव्य हैं। व्यक्तित्वप्रधान में प्रेमप्रधान और भक्तिप्रधान भेद हैं। इसके भी अवांतर भेदों की चर्चा दूबे जी ने की है। देशी या विदेशी काव्यपरंपरा से उद्भूत साहित्य मर्मज्ञ के लिए निर्मित खंडकाव्यों को दूबे जी ने फिर से दो वर्गों में विभाजित किया। पुरानी शैलो और नवीन शैली के खंडकाव्य। नवीन शैली के खंडकाव्यों का विस्तृत वर्णनात्मक और संक्षिप्त प्रभावात्मक इन दो भागों में पुनः वर्गीकरण किया। संक्षिप्त प्रभावात्मक शैली के खंडकाव्यों को दूबे जी ने पुनः सर्गबद्ध और सर्गविहीन दो भागों में विभाजित किया है। इसके भी अवांतर भेदों का निर्धारण डॉ. दूबे जी ने किया है।[59]

उपर्युक्त वर्गीकरण देखने पर ज्ञात होता है कि दूबे जी ने खंडकाव्य रूपों का वर्गीकरण नहीं किया है बल्कि खंडकाव्य साहित्य के उपलब्ध रूपों का वर्गीकरण किया है।

प्रो. देशराज सिंह भाटी ने लिखा है, "हिंदी साहित्य में विकसित खंडकाव्य की परंपरा को परिलक्षित करते हुए उसके निम्नलिखित भेद किए जा सकते हैं। (1) प्रेमप्रधान खंडकाव्य (2) भक्तिप्रधान खंडकाव्य (3) परंपराप्रधान खंडकाव्य।"[60]

इस प्रकार यह वर्गीकरण खंडकाव्यों का न होकर खंडकाव्य-साहित्य का प्रतीत होता है।

उपरोक्त विवेचन से निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने तरिके से खंडकाव्यों का वर्गीकरण करने का प्रयास किया है। इसमें छंदों के आधार पर तथा रूपविधान की दृष्टि से किया हुआ वर्गीकरण अधिक समुचित लगता है।

9. खंडकाव्य : विशेषताएँ :-

विभिन्न आचार्यों द्वारा दी गई खंडकाव्य की परिभाषाओं से खंडकाव्य की कुछ विशेषताएँ लक्षित होती हैं जो इस प्रकार हैं -

1) यह एक प्रबंध काव्य हैं - इसमें जीवन के किसी एक मार्मिक पक्ष का चित्रण सीमित रूप में होता है।
2) खंडकाव्य का कलेवर लघु होता है।
3) इसका कथानक संक्षिप्त होता है; परंतु इसमें कथासंगठन आवश्यक है।
4) खंडकाव्य अपने आपमें पूर्ण होता है।
5) इसमें प्रासंगिक कथाओं का प्रायः अभाव रहता है।
6) खंडकाव्य में चरित्रचित्रण, वातावरण चित्रण आदि की योजना रहती है। लेकिन महाकाव्य के समान विस्तृत रूप में नहीं।
7) खंडकाव्य में सर्गविभाजन अनिवार्य नहीं।
8) महाकाव्य के समान खंडकाव्य का उद्देश्य चतुवर्ग के एक फल की प्राप्ति होती है।

9) खंडकाव्य में एक ही रस प्रमुख रहता है। अन्य रस सहायक रूप में आते हैं, लेकिन विस्तार से नहीं।

10) मंगलाचरण और आशीर्वचन इसमें आवश्यक नहीं।[61]

डॉ. देसाई ने 'आधुनिक हिंदी काव्य' में खंडकाव्य की विशेषताएँ इसप्रकार दी है। -

1) खंडकाव्य पद्यात्मक रचना होती है।
2) खंडकाव्य में एक ही घटना का चित्रण होता है।
3) खंडकाव्य में महत् चरित्र के जीवनांश का चित्रण होता है।
4) खंडकाव्य महाकाव्य की तुलना में लघु रचना होती है।
5) खंडकाव्य उद्देश्य की दृष्टि से बोधगम्य रचना होती है।
6) खंडकाव्य में विस्तृत वर्णन के लिए स्थान नहीं होता है।[62]

इसप्रकार खंडकाव्य में महाकाव्य की सभी विशेषताएँ मौजूद रहती हैं लेकिन व्यापकता की दृष्टि से खंडकाव्य का विषय महाकाव्य की अपेक्षा सीमित होता है। उपन्यास और कहानी तथा नाटक और एकांकी में जो अंतर होता है, वही महाकाव्य और खंडकाव्य में होता है।

10. खंडकाव्य के लक्षण :-

खंडकाव्य के सामान्यतः निम्नलिखित लक्षण ठहरते हैं।

1. खंडकाव्य का नायक सुर, असुर, मनुष्य, इतिहासप्रसिद्ध अथवा कल्पित या शांत, ललित, उदात्त में से किसी भी प्रकार का हो सकता है।
2. खंडकाव्य में नायक के जीवन की एक ही घटना का वर्णन होता है, जो जीवन के किसी एक ही पक्ष की झलक प्रस्तुत करता है।
3. खंडकाव्य में कथासंगठन आवश्यक है। कथाविन्यास में क्रम, आरंभ, विकास, चरमसीमा और निश्चित उद्देश्य हो।
4. सर्गबद्धता अनिवार्य नहीं है।
5. खंडकाव्य की कथा का ख्यात अथवा इतिहास प्रसिद्ध होना अनिवार्य नहीं है।
6. खंडकाव्य में प्रारंभिक कथाओं का अभाव होता है।
7. खंडकाव्य अपने छोटे आकार में ही पूर्ण होता है। नाम के 'खंड' शब्द से उसे किसी अन्य काव्यरूप का खंड नहीं समझना चाहिए।
8. खंडकाव्य जैसे किसी अन्य काव्यरूप का खंड नहीं है, वैसे ही जिस अनुभूति की अभिव्यक्ति उसमें होती है, वह भी खंडित न होकर पूर्ण होती है, जिसका प्रभाव अवश्य ही कवि पर आंशिक पड़ता है।
9. खंडकाव्य महाकाव्य के गुणों से शून्य नहीं होता है।

10. खंडकाव्य में महाकाव्य की भाँति युग को कोई महत् संदेश नहीं दिया जाता। उसमें व्यक्ति को कोई उपदेश दिया जाता है।
11. खंडकाव्य का चतुर्वर्ग-फल में से किसी एक की प्राप्ति उद्देश्य होता है।
12. खंडकाव्य में एक रस समग्र अथवा अनेक रस असमग्र रूप में रहते हैं।
13. खंडकाव्य में सभी संधियाँ नहीं होती।
14. खंडकाव्य की रचना भाषा या विभाषा में हो सकती है।[63]

आधुनिक खंडकाव्य साहित्य को दृष्टि में रखकर 'आधुनिक हिंदी खंडकाव्य' में खंडकाव्य का लक्षण निर्धारण इस प्रकार किया है -

1. यह एक प्रबंधकाव्य है, जिसमें जीवन के किसी मार्मिक पक्ष का चित्रण सीमित दृष्टिपथ से होता है।
2. काव्य कलेवर अपेक्षाकृत लघु रहता है।
3. कथा का संगठन - चाहे कथावस्तु कमजोर हो - रहता अवश्य है।
4. काव्य अपने आप में संपूर्ण रहता है।
5. चरित्रचित्रण, वातावरण चित्रण आदि की योजना रहती है।
6. सर्गविभाजन अनिवार्य नहीं।
7. छंदोबद्धता की आवश्यकता नहीं, मुक्त छंद में भी काव्यरचना हो सकती है।
8. काव्योद्देश्य की सिद्धि काव्य का लक्ष्य रहता है।[64]

आधुनिक हिंदी खंडकाव्य पर एक दृष्टिक्षेप डालने से यह परिलक्षित होता है कि खंडकाव्य के मूल लक्षण इस विकास परंपरा में अक्षुण्ण रूप से विद्यमान हैं।

11. खंडकाव्य के तत्त्व :-

महाकाव्य के समान खंडकाव्य भी प्रबंधकाव्य के अंतर्गत आता है। अतः महाकाव्य के समान ही खंडकाव्य के तत्त्व होते हैं परंतु विस्तृत रूप में न होकर संक्षिप्त रूप में रहते हैं।

1. कथावस्तु
2. चरित्र-चित्रण
3. संवाद
4. देश-काल-वातावरण
5. रस-वर्णन
6. भाषाशैली
7. प्रतिपाद्य (उद्देश्य)[65]

आ)

1. खंडकाव्य और महाकाव्य :-

खंडकाव्य और महाकाव्य दोनों प्रबंधकाव्य के महत्वपूर्ण भेद हैं। अतः प्रबंधकाव्य के गुण दोनों

में समान रूप से मिलते हैं। दोनों विधाओं की रचनाशैली समान होती है। खंडकाव्य में नायक के जीवन के किसी एक ही पक्ष की झाँकी मिलती है, महाकाव्य में नायक का समग्र जीवन प्रस्तुत होता है। महाकाव्य में प्रासंगिक कथाओं के लिए पर्याप्त स्थान रहता है, जबकि खंडकाव्य में प्रासंगिक कथाओं का प्रायः अभाव रहता है। महाकाव्यों में पात्रों का संपूर्ण चरित्र-चित्रण मिलता है लेकिन खंडकाव्य में संपूर्ण चरित्र-चित्रण के लिए गुंजाइश नहीं रहती। महाकाव्य में शृंगार, वीर, शांत इनमें से एक प्रधान रस होना अनिवार्य होता है, खंडकाव्य में ऐसी कोई अनिवार्यता नहीं है। महाकाव्य सर्गबद्ध होता है और उसके प्रत्येक सर्ग में एक छंद होता है। सर्ग के अंत में छंद परिवर्तन होना आवश्यक होता है। खंडकाव्य सर्गबद्ध भी होते हैं और सर्गरहित भी।

खंडकाव्य में महाकाव्य के अनेक उपादान अप्रयोज्य अथवा सीमित रूप में प्रयोज्य हैं। महाकाव्य का कथानक इतिहासप्रसिद्ध, परंपराप्रसिद्ध अथवा किसी महच्चरित्र का चरित-विकास होता है। किंतु खंडकाव्य के कथानक पौराणिक, ऐतिहासिक, परंपराश्रित अथवा काल्पनिक भी हो सकते हैं। महाकाव्य में वर्णन की विविधता रहती है, खंडकाव्य में नहीं। हाँ, कभी-कभी प्रकृतिवर्णन संक्षेप में दिखाई देता है। महाकाव्य और खंडकाव्य दोनों का उद्देश्य चतुर्वर्ग की प्राप्ति (खंडकाव्य में एक फल की प्राप्ति भी चल सकती है), सत्य का उद्घाटन और आनंद की प्राप्ति होता है।

'बलदेव उपाध्याय' महाकाव्य और खंडकाव्य के अंतर को दर्शाते हुए लिखते हैं कि, "वह काव्य जो मात्रा में छोटा परंतु गुणों में उससे कदापि शून्य न हो, खंडकाव्य कहलाता है। महाकाव्य विषयप्रधान होता है परंतु खंडकाव्य मुख्यतः विषयीप्रधान होता है, जिसमें लेखक कथानक के स्थूल ढाँचे में अपने वैयक्तिक विचारों का प्रसंगानुसार वर्णन करता है।"[66]

महाकाव्य में सभी रसों की योजना रहती है। खंडकाव्य में चतुर्वर्ग में से किसी एक वर्ग के फल की प्राप्ति के कारण एक ही रस की योजना होती है। कई खंडकाव्यों में अनेक रसों की योजना भी रहती हैं परंतु असमग्र रूप में। महाकाव्य और खंडकाव्य दोनों का नामकरण नायक-नायिका या प्रमुख घटना के आधार पर होता है।

इसप्रकार खंडकाव्य में महाकाव्य की सभी विशेषताएँ मौजूद रहती हैं लेकिन व्यापकता की दृष्टि से खंडकाव्य का विषय महाकाव्य की तुलना में सीमित रहता है। उपन्यास और कहानी में जितना अंतर है उतना ही अंतर महाकाव्य और खंडकाव्य में होता है।

2. खंडकाव्य और एकार्थ काव्य :-

महाकाव्य और खंडकाव्य के बीच आने वाला काव्यरूप जो कि प्रबंधकाव्य का ही एक भेद है। 'एकार्थता' एकार्थ काव्य की प्रमुख विशेषता है। खंडकाव्य और एकार्थ काव्य में यही विषमता है कि खंडकाव्य में पात्र के जीवन के विशिष्ट पक्ष का उद्घाटन किया जाता है जबकि एकार्थ काव्य में पात्र का समग्र जीवन एकार्तोन्मुख चित्रित होता है। एकार्थ काव्य (हिंदी के) प्रायः सर्गबद्ध हैं। खंडकाव्य सर्गबद्ध और सर्गविहीन दोनों प्रकार के हो सकते हैं।

खंडकाव्य और एकार्थ काव्य दोनों की रचना भाषा या विभाषा में होती है। दोनों काव्यरूपों में पंचसंधियाँ नहीं होतीं। एकार्थ काव्य में घटनावैविध्य होता है किंतु महाकाव्य की अपेक्षा कथाप्रवाह के मोड़ कम होते हैं। एक सीमा तक एकार्थ काव्य खंडकाव्य की अपेक्षा महाकाव्य के अधिक निकट है। 'हिंदी साहित्य कोश' में इस बात की पुष्टि मिलती है। "वस्तुतः महाकाव्यात्मक उपन्यास, सामान्य उपन्यास और कहानी में जो अंतर है, वही अंतर महाकाव्य, एकार्थ काव्य और खंडकाव्य में है।" [67]

आ. विश्वनाथ के एकार्थ काव्य लक्षण संबंधी 'समुत्थितम्' पाठ को शुद्ध मानते हुए एकार्थ काव्य के निम्नांकित लक्षण हैं।" [68]

1. भाषा या विभाषा में एकार्थ काव्य की रचना होती है।
2. उसकी कथा सर्गबद्ध होती है।
3. पंचसंधियों में से सब संधियाँ नहीं होतीं।
4. कोई एक अर्थ अथवा प्रयोजन की सिद्धि उसका उद्देश्य होता है।

इसप्रकार हम यह कह सकते हैं कि एकार्थ काव्य प्रबंधकाव्य का ही एक भेद होकर उसमें प्रबंधकाव्य की कतिपय विशेषताएँ मौजूद हैं। महाकाव्य तथा खंडकाव्यों के विशेषताओं से युक्त होकर भी खंडकाव्य की अपेक्षा एकार्थ काव्य महाकाव्य के अधिक समीप है।

3. खंडकाव्य और चरित काव्य :-

'चरित काव्य' नाम से ही अर्थ स्पष्ट होता है - किसी नायक के जीवन का वृत्तांत। नायक का जन्म से मृत्यु तक का जीवन कथाबद्ध रूप में चरित काव्य में वर्णित होता है। कभी-कभी नायक के जीवनवृत्त के साथ उसकी वंशावली का भी वर्णन होता है। परंतु खंडकाव्य में नायक के जीवन के किसी विशेष पक्ष का ही चित्रण होता है। चरित काव्य में नायक की वंशावली का वर्णन, पूर्वजन्मों की कथा, जन्म का कारण इ. का विस्तृत वर्णन होता है। चरित काव्य की भाँति खंडकाव्य में कथा-संगठन आवश्यक है किंतु खंडकाव्य की कथा विस्तृत नहीं होती। स्पष्टतः चरितकाव्य वर्णनात्मक प्रबंध रचना है जिसमें किसी व्यक्तिविशेष अथवा महापुरुष का जीवन चरित घटनाक्रम के अनुसार लिखा जाता है। स्पष्ट है चरित काव्य जीवनी के अधिक समीप है। खंडकाव्य की सीमित कथायोजना में प्रासंगिक कथाओं के लिए स्थान नहीं मिल पाता। इसके विपरित चरित काव्य में अवांतर कथाओं की भरमार होती है।

चरित काव्य के संदर्भ में डॉ. धीरेंद्र वर्मा ने लिखा है, "खंडकाव्य चरित काव्य की अपेक्षा अधिक कलात्मक होता है। उसमें महाकाव्य का अलंकरण, चमत्कार, पांडित्य प्रदर्शन सब कुछ होता है। चरित काव्य में इन तत्वों का नितांत अभाव होता है।... चरित काव्य की वस्तुयोजना इतिवृत्तात्मक, स्फीत और विशृंखल होती है, इसके विपरीत खंडकाव्य की कथायोजना वर्णनात्मक, संगठित एवं शृंखलाबद्ध होती है।... चरित काव्य का कथारंभ वक्ता-श्रोता के रूप में होता है।" [69]

निष्कर्षतः चरित काव्य जीवनी के समीप प्रतीत होने वाला काव्यरूप है जबकि खंडकाव्य में जीवन के किसी एक पहलू पर ही प्रकाश डाला जाता है।

4. खंडकाव्य और प्रेमाख्यानक काव्य :-

"यदि आस्थानक काव्य का अर्थ हमने कथाकाव्य ले लिया तो अनुचित नहीं होगा, क्योंकि रामबाबू शर्मा ने सूफी प्रेमाख्यानक काव्य को कथाकाव्य का अवांतर भेद स्वीकारा है।"[70]

उद्देश्य की दृष्टि से प्रेमाख्यानक काव्य के सूफी एवं सूफीतर दो भेद हैं। सूफी प्रेमाख्यानक काव्य प्रतीकात्मक होते हुए वहाँ लौकिक-अलौकिक द्विविध कथा समांतर चलती है। असूफी में यह द्विविधता न होकर उसमें लौकिक प्रेमकथा ही प्रमुख होती है।

प्रेमाख्यानक काव्य का उद्देश्य मनोरंजन होता है जबकि खंडकाव्य में चतुर्वर्ग में से किसी एक फल की प्राप्ति होता है। प्रेमाख्यानक काव्य का कथाविन्यास स्फीत, विशृंखल, जटिल तथा अवांतर कथाओं से भरा हुआ होता है। इसके विपरीत खंडकाव्य की कथा संगठित होकर उसमें प्रासंगिक कथाओं का प्रायः अभाव हो रहता है। प्रेमाख्यानक काव्य के नायकों का वीररूप प्रेमीरूप से दबा हुआ होता है, खंडकाव्य में ऐसा नहीं होता। प्रेमाख्यानक काव्य में विचारों एवं भावों की गंभीरता, उद्देश्य की महत्ता, बौद्धिक ऊँचाई तथा भावभूमि की व्यापकता अधिक नहीं होती। जबकि खंडकाव्य में इन बातों का महत्व अधिक होता है। "डॉ. रामकुमार वर्मा ने प्रेमाख्यानक काव्य को 'अलिफ लैला' का रूपांतर तक कहा है।"[71]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि खंडकाव्य और प्रेमाख्यानक काव्य में अंतर है। मनोरंजन के उद्देश्य से लिखा हुआ प्रेमाख्यानक काव्य जिसका उद्दिष्ट लौकिक प्रेमकथा ही होता है। खंडकाव्य का लक्ष्य मात्र मनोरंजन न होकर उसमें कोई न कोई उपदेश अवश्य रहता है।

इ) नागार्जुन के खंडकाव्यों का स्वरूप :-

जनकवि नागार्जुन 'विद्रोही' कवि थे। यह विद्रोह उस परिवेश की देन है, जिनके बीच उन्होंने जीवन जिया और अपने अंदर की विद्रोहवृत्ति को सदैव रचनात्मक दिशाओं की ओर सक्रिय किया। समाज की विषमता और पुरानी विचारशृंखला से क्रोधित होकर उन्होंने ऐसी विचारधारा का कड़ा विरोध किया और समाज में परिवर्तन चाहा। वे समाज में ऐसा परिवर्तन चाहते थे कि जहाँ पूँजीवादियों का राज न हो, समाज में विचार स्वातंत्र्य हो तभी मानव मानव बनकर रह सकता है। नागार्जुन की रचनाभूमि लोकजीवन का व्यापक क्षेत्र है।

नारी के प्रति सम्मान और विनम्रता का भाव नागार्जुन के रचनाकार की प्रमुख विशेषता है। वे समाज में दो ही वर्ग मानते थे - शोषक और शोषित। शोषितों के प्रति आस्था उनकी रचनाओं में हमें देखने को मिलती है। इस दृष्टि से नारी भी शोषित ही है।

बहुभाषी एवं बहुविधात्मक लेखन करने वाले नागार्जुन ने हिंदी साहित्य को बहुत बड़ा योगदान दिया है। उन्होंने अपने साहित्य में विविध समस्याओं पर लेखन किया है। हिंदी में बहुविधा लेखन के साथ दो खंडकाव्यों का भी निर्माण किया। भस्मांकुर और भूमिजा नागार्जुन के ये पौराणिक खंडकाव्य हैं। उन्होंने पौराणिक कथा के माध्यम से आधुनिक समस्याओं को स्पष्ट करने की कोशिश की है।

भस्मांकुर - स्वरूप :-

कवि नागार्जुन ने 'कामदहन' का पौराणिक प्रसंग लेकर 'भस्मांकुर' खंडकाव्य की निर्मिति की। 1971 में 'भस्मांकुर' का प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ। 'भस्मांकुर' नाम सांकेतिक है। 'भस्मांकुर' का अर्थ है - भस्म के बाद पैदा होने वाला अंकुर। अर्थात ध्वंस के पश्चात अनिवार्यतः उभरने वाला सृष्टि का रूप। कालिदास ने अपनी कृति 'कुमारसंभवम्' के तीसरे और चौथे सर्गों में 'कामदहन' प्रसंग को उठाया है। इस दृष्टि से डॉ. संतोषकुमार तिवारी का कथन लक्षणीय है, "कालिदास के 'कुमारसंभवम्' से कामदहन के इस प्रसंग को उठाया गया है। 'भस्मांकुर' अर्थात भस्म होने के बाद पैदा होने वाला अंकुर। कामदेव अपने ध्वंस के बाद भी उभरने वाली सृष्टि का अनिवार्य रूप है।" [72]

'भस्मांकुर' पौराणिक आख्यान है, जिसमें शिव ने अपना तृतीय नेत्र खोलकर कामदेव को भस्म करने का प्रसंग है। इस 'अल्प' प्रसंग को लेकर नागार्जुन ने उसे खंडकाव्य का रूप दे दिया।

तारकासुर (तारक नाम का असुर) देवताओं को बहुत समय से पीड़ित कर रहा था। देवगण तारकासुर के भय से मुक्त होने के लिए शिव-पार्वती से उत्पन्न संतान चाहते थे, जो तारकासुर का वध कर सके। इसलिए सुर-समाज ने शिव-पार्वती के विवाह की कामना की। उद्देश्य पूर्ति के लिए उन्होंने योगी शिव के चित्त को चंचल बनाने का कार्य कामदेव को सौंप दिया। मदन ने इस कार्य में रति और वसंत की सहायता ली। काम जब शिव जी को प्रभावित करने कैलास पहुँचा, तो उन्होंने अपना तृतीय नेत्र खोलकर उसे भस्म कर दिया।

काम को भस्म करने के पूर्व पार्वती के स्वप्न की चर्चा, कामदेव के सखा के रूप में कैलास पर आकस्मित वसंत का आगमन, रति और काम का पारस्पारिक वार्तालाप, वसंत का काम और रति के आपसी झगड़े को सुलझाना आदि प्रसंग आए हैं। यही वे प्रसंग हैं, जो भस्मांकुर की पौराणिक कथा को मानवीय बनाते हैं।

काम के भस्म होने के पश्चात रति का विलाप लक्षणीय है। वह भी आत्मदाह का विचार करती है। परंतु इतने में आकाशवाणी होती है - "अरी बावरी, तेरा पति मरा नहीं है। वह कभी मर ही नहीं सकता.... कोई आग कामदेव के शरीर को भस्म नहीं कर पाएगी कभी। भस्म हो भी जाए तो अपने आप अंकुर बनकर उस भस्मराशि से फूट पड़ेगा बार-बार... वह सृष्टि की कामना का अक्षय केंद्र है।" [73]

स्पष्ट है 'भस्मांकुर' में देवाधिदेव महादेव की जयजयकार नहीं बल्कि सकल कामनाओं के उत्स, सृष्टि के मूल कामदेव की वंदना की गई है। "वसंत के आविर्भाव से लेकर कामदेव के भस्म होने तक और बादवाली आश्वासन की आकाशवाणी तक अति संक्षिप्त कथावस्तु ही 'भस्मांकुर' का मूल आधार बनी है।" [74]

नागार्जुन का कालिदास के 'कुमारसंभव' से इस कथाबीज को उठाना, मात्र संयोग नहीं है। नागार्जुन कालिदास से प्रारंभ से प्रभावित रहे हैं। इन्होंने संस्कृत का गहन अध्ययन किया है।

कालिदास पर इनकी प्रसिद्ध कविता भी है और 'मेघदूत' का भी अनुवाद किया है। कहने का तात्पर्य है कि नागार्जुन पर कालिदास का प्रभाव है, जो 'भस्मांकुर' में देखा जा सकता है, कालिदास से प्रेरणा लेकर उन्होंने इस काव्य की रचना की।

खंडकाव्य के तत्वों के आधार पर 'भस्मांकुर का मूल्यांकन' :-

खंडकाव्य के निम्नलिखित तत्व होते हैं। -

1. कथावस्तु
2. चरित्र-चित्रण
3. संवाद
4. देश-काल-वातावरण
5. भाषाशैली
6. रसवर्णन
7. उद्देश्य

1. कथावस्तु :-

कथावस्तु में खंडकाव्य का समस्त सौंदर्य एवं प्राणशक्ति निहित रहती है। अतः कथावस्तु खंडकाव्य का प्रमुख तत्व नाना जाता है। खंडकाव्य का कथानक नायक के जीवन के किसी प्रधान घटना पर आधारित होता है। उसमें जीवन के किसी एक पक्ष की झलक मिलती है। लघु कलेवर होते हुए भी कथा अपने आप में पूर्ण होती है। खंडकाव्य का कथानक ऐतिहासिक, प्रख्यात, उत्पाद्य किसी भी प्रकार का हो सकता है। इसमें अवांतर कथाओं का प्रायः अभाव ही रहता है। और न संधियों की योजना रहती है। खंडकाव्य सर्गबद्ध हो सकता है और नहीं भी। फिर भी अगर सर्गबद्ध हो तो सर्गों की संख्या आठ से कम होनी चाहिए। कथावस्तु का निश्चित विकास और अंत होता है।

'भस्मांकुर' खंडकाव्य की काव्यपंक्तियों को देखने पर स्पष्ट होता है कि इसका कथानक अल्प है। कवि नागार्जुन ने 'कामदहन' जैसे सीमित प्रसंग को लेकर 854 पंक्तियों में सर्गविहीन 'भस्मांकुर' का कथानक पूरा किया है। "कामदहन वाली कथावस्तु को काव्य का रूप देने का संकल्प नया नहीं था। पिछले सात-आठ वर्षों से यह कथानक अपने मन-मस्तिष्क के अंदर एतदर्थ-पकत-उबलता रहा है।

शिव की पहली पत्नी सती ने जब अपने पति के प्रति अपने पिता के यहाँ यज्ञ के अवसर पर अपमान भरे उद्गार सुने तब वह हवनकुंड में कूद पड़ी। शिव के गणों ने यज्ञविध्वंस किया और पत्नी के वियोग से शिव कैलास शिखर पर ध्यानयोग में लीन हो गए।

इधर तारकासुर से संत्रस्त देवसमाज आत्मरक्षा के लिए प्रजापति ब्रह्मा के पास गए। ब्रह्मा ने कहा कि यदि शिवविवाह उमा (हिमालय की पुत्री) से हो जाए तो उनसे जन्म लेने वाला बालक महाबलो तारकासुर को पराभूत कर सकेगा। ब्रह्मा की सलाह के अनुसार देवराज इंद्र ने कामदेव को बुलाकर कहा कि कैलास शिखर पर ध्यानमग्न शिव का मन हिमाद्रिनंदिनी गौरी के प्रति आकर्षित करो। कामदेव के साथ वसंत और रति कैलास पहुँचे। यहीं से भस्मांकुर का कथानक आरंभ होता है।

वसंत ने कैलास पर्वत के अँचल में जादू कर दिया। सर्वत्र, चारों ओर वसंत का वैभव व्याप्त हो गया। किशोरी पार्वती ने सखियों से अपने सपनों की चर्चा की। पार्वती का सौंदर्य देखकर कामदेव आश्वस्त हो गया उसे विश्वास हो गया कि शिवपार्वती की ओर अवश्य आकर्षित होंगे। पार्वती आई। पार्वती को देखकर शिव जी का मन विचलित हुआ। इस स्थिति को जानने के लिए उन्होंने इधर-उधर देखा। उनके दृष्टिपथ में कामदेव आ गया। उन्होंने क्रोधित होकर कामदेव की तरफ देखा, तत्क्षण ही कामदेव भस्म हो गया। रति विलाप करने लगी। उसने आत्मदहन करना चाहा परंतु इतने में आकाशवाणी हुई, "अरी बावरी, तेरा पति मरा नहीं। वह कभी नहीं मर सकता। काम अगर है। वह भस्म हो गया तो भी वह अपने आप अंकुर बनकर भस्मराशि से फूट पड़ेगा। शिव-पार्वती परिणयसूत्र में जब आबद्ध होंगे तब स्वयं शिव ही उसे मदद के लिए आमंत्रित करेंगे। [76]

भस्मांकुर का कलेवर लघु होते हुए भी अपने आप में पूर्ण है। इस खंडकाव्य में तीन मौलिक उद्भावनाएँ हैं - प्रथम, वसंत के रूप में एक सच्चे मित्र के दायित्व का चित्रण किया है। दूसरे, पार्वती के स्वप्न की घटना मनोवैज्ञानिक है, जो कवि की नवीन कल्पना है। तीसरे, 'मदनदहन' के उपरांत आकाशवाणी की नूतन उद्भावना करके इस पौराणिक आख्यान को नया रूप एवं मोड़ दिया है। इस संदर्भ में डॉ. तिवारी ने कहा है कि, "पौराणिक आख्यान पर आधारित 'भस्मांकुर' नवीन जीवन के नए संदर्भों को उद्घाटित करता है।" [77]

2. चरित्र चित्रण :-

कथावस्तु और चरित्र का अन्योन्याश्रित संबंध है। यदि कोई कथावस्तु है तो निश्चित रूप से उसमें कोई पात्र होगा ही। खंडकाव्य के लघु कलेवर में व्यक्ति के संपूर्ण चरित्र-चित्रण के लिए गुंजाइश नहीं रहती है। उसमें कहानी तथा एकांकी की तरह व्यक्ति के चरित्र के एक अंश की झलक रहती है। पात्रों की संख्या भी कम रहती है। चरित्र चित्रण के बारे में डॉ. उमाकांत का मत इसप्रकार है, "खंडकाव्य में चरित्र के अंश का ही प्रतिपादन होता है। उसमें कहानी एवं एकांकी के समान ही व्यक्तित्व की केवल एक झलक दिखाई जाती है। फिर भी चरित्र चित्रण खंडकाव्य का अनिवार्य तत्व है और साथ ही आवश्यक है उस चित्रण में मौलिकता।" [78]

प्रमुख पात्र - नायक - पुरुष या स्त्री, मानव या दानव, प्रख्यात अथवा काल्पनिक, उदात्त, ललित, शांत में से कोई भी हो सकता है। मनुष्य पर प्रभाव डालने हेतु मानवीय पात्र ही सिद्ध होते हैं इसीलिए कविगण प्रमुख पात्र के रूप में किसी विशिष्ट गुणसंपन्न अथवा आदर्श व्यक्ति का ही चयन करते हैं। इस दृष्टि से डॉ. उमाकांत का विचार है कि, "खंडकाव्य के लिए यह आवश्यक नहीं कि नायक अथवा प्रमुख पात्र धीरोदात्त ही हो और स्पष्ट शब्दों में खंडकाव्य का प्रधान चरित्र द्वितीय श्रेणी का हुआ करता है। महाकाव्य के समान उदात्त नहीं।" [79]

खंडकाव्यों में पात्रों की संख्या कम होती है। स्पष्ट है इसमें सहायक पात्रों की भरमार नहीं होती। सहायक पात्र केवल प्रमुख चरित्र को उजागर करने हेतु प्रयुक्त होते हैं। आवश्यकतानुसार खलनायक का प्रयोजन होता है।

भस्मांकुर पौराणिक खंडकाव्य होकर उसमें प्रमुख पात्र है - कामदेव, रति और वसंत। इनके अलावा इसमें शिव, पार्वती, जया, विजया, नारद, ब्रह्मा आदि पात्र गौण रूप में हैं। वे केवल संदर्भ मात्र हैं, मुखर नहीं।

कामदेव :-

कामदेव 'भस्मांकुर' का प्रमुख पात्र है; खंडकाव्य का नायक कहलाता है। कामदेव ब्रह्मा का मानसपुत्र है। वह अति सुंदर है तथा प्रेम का अधिष्ठाता है। वह प्रमुख देवता नहीं है, फिर भी उसके बिना सुरसमाज अधूरा है। उसकी चारित्रिक विशेषताएँ इसप्रकार हैं। -

अ) स्वामि भक्त :-

कामदेव इंद्रदेव को अपना स्वामी मानता है। स्वामी की आज्ञा का पालन करना तो उसका कर्तव्य हो जाता है। इसलिए तो सुरसमाज के हित के लिए शिव और पार्वती का विवाह संपन्न होने हेतु तपस्वी शिव की तपस्या भंग करने का काम इंद्रदेव से कामदेव को सौंपा दिया जाता है। इसमें बहुत कठिनाई थी, फिर भी कामदेव ने प्रभु की आज्ञा मानकर यह ठान लिया कि प्राण देकर भी वह सुर-समाज के प्रधान की ओर से सौंपा गया यह काम पूरा करेगा।

ब) कर्तव्यपरायण :-

कामदेव जो कार्य हाथ में लेता है, उसे पूरा करने में सदैव तत्पर रहता है। शिव जी के क्रोध का अनुमान होते हुए भी वह उनकी तपस्या भंग करने की जिम्मेदारी उठाता है और पूर्ण भी करता है। डॉ. पाटील जी का मानना है - "जो सच्चे वीर होते हैं, वे मदन की तरह कार्य करते रहते हैं। पूरी निष्ठा और लगन से। विपरीतता का भाव उन्हें छू तक नहीं जाता।"[80]

क) आदर्श पति :-

आदर्श पति वह होता है, जो अपनी पत्नी पर पूरा विश्वास करके उसके सुख-दुख में हिस्सेदार होता है। कामदेव अपनी पत्नी रति से बेहद प्यार करता है। तभी तो हर वक्त रति उसके साथ होती है।

ड) आदर्श सखा :-

कामदेव वसंत का जिगरी दोस्त है। सच्चा दोस्त अपने दोस्त के मुश्किल काम में अवश्य मदद करता है। कामदेव और वसंत आदर्श सखा हैं।

रति :-

कामदेव की पत्नी रति प्रजापति दक्ष की पुत्री है। अपने सौंदर्य और कोमल स्वभाव के लिए वह प्रसिद्ध है। वह क्षणभर भी अपने पति कामदेव से अलग नहीं रह सकती। वह 'भस्मांकुर' की नायिका है। उसकी चारित्रिक विशेषताएँ इसप्रकार हैं-

अ) अद्वितीय सुंदरी :-

रति अपने अनुपम सौंदर्य के लिए ख्यात हैं। जैसे विद्या की देवता सरस्वती मानी जाती है, वैसे ही सौंदर्य की रति। 'भस्मांकुर' में वसंत के इन्हीं वाक्यांशों से रति के सौंदर्य का अनुमान लगाया जा सकता है। वसंत कामदेव से कहता है -

"तुम जाओ, बूढ़े का करो इलाज
भाभी को चाहे ले जाओ साथ
मगर इन्हें तुम रखना अपने पास
मत करना उस खूसट पर विश्वास
पकड़ लिया यदि शिव ने रति का हाथ
सोचो, गौरी का होगा क्या हाल..." [81]

ब) मदन की प्रेरणास्त्रोत :-

रति हमेशा मदन की प्रेरणा रही है। वह हर पल, हर जगह कामदेव के साथ रहती है। उसके हर काम में हमेशा प्रेरणा देती रही है। शिव जी की तपस्या भंग करने के काम में भी वह मदन को प्रोत्साहन देती रहती है। तपस्या में मग्न शिव को काम अपने बाणों से लक्षित करना चाहता था। इस अवसर पर रति उसे प्रेरित करती हुई कहती है -

"संधानो लक्ष्य!
हाँ, हाँ, बढ़िया मौका आया हाथ
मत चूको यह अवसर छोड़ो तीर..." [82]

क) भारतीय नारी की प्रतिनिधि :-

कोई भी सहृदय नारी दूसरी नारी पर अत्याचार होते देखकर क्रोधित होती है। एक स्त्री का दुख स्त्री ही जान सकती है। रति को भी नवयौवना पार्वती का विवाह बूढ़े शिव जी के साथ अयोग्य प्रतीत होता है। वह अपने मन में पैदा असंतोष कामदेव के सामने व्यक्त करती है। -

"मुझको तो प्रिय, लगता है बेकार
सारा नाटक। आखिर वह सुकुमारी
क्यों बूढ़े को करने लगी पसंद?
क्या अनमेल समागम है अनिवार्य?" [83]

ड) विरहिणी रूप :-

सदा पति की छाया बनकर रहने वाली रति शिव द्वारा काम को भस्म करने पर विलाप करती है। मदन के विरह में व्याकुल रति आत्मदाह करने का निश्चय करती है।

"मूर्छित ही रह जाती मैं चिरकाल
रह जाती मैं निरवधि संज्ञाशून्य
है असहय अब क्षण भर भी वैधव्य
क्यों न करूँ मैं आत्मदाह तत्काल।" [84]

इसप्रकार नायिका होने के सभी गुण रति में विद्यमान है।

वसंत :-

वसंत 'भस्मांकुर' का तृतीय महत्वपूर्ण पात्र है। ऋतुओं का राजा है वह। प्रारंभ में ही उसका आकस्मित आगमन हुआ है। उसके आकस्मिक आने से प्राणि-जगत, सृष्टि में उथल-पुथल मच दई

है। 'भस्मांकुर' में मदन के मित्र के रूप में वसंत का उल्लेख है। "भस्मांकुर का संक्षिप्त वसंत तो यों भी कृत्रिम वसंत है, उसे माया कानन कहा गया है..."[85]

मदन का मित्र वसंत हमेशा मदन को असके कार्य में सहयोग देता है। उसका वाहन तोता है। जादूगर के समान असीम सामर्थ्य का धनी होने के साथ ही विनोद-वृत्ति का भी उत्स है। शुरू में ही वह अपना परिचय देता है -

"मैं वसंत, मैं मदनसखा सुकुमार
त्रिभुवन पर मेरा अखंड अधिकार
मैं मरु-उर में उद्‌भिद का अवतार
नवल सृष्टि विधि को मेरा उपहार
मैं धरती का यौवन, मैं शृंगार
ऋतुएँ करती हैं मेरा मनुहार।"[86]

अ) आदर्श मित्र :-

वसंत को मदन के मित्र के रूप में दिखाया गया है। मदन की वह हर समय मदद करता है। हर पल उसे साथ देने का निश्चय करता है। -

"सहज-सखा सहभोगी रुचिर वसंत
अंतिम क्षण तक देगा अपना साथ
सांग सवाहन सायुध मेरा मित्र
फैलाकर बैठा है मायाजाल।"[87]

ब) विनोदवृत्ति का परिचायक :-

मदनसखा वसंत में विनोदवृत्ति भी है। देवाधिदेव शिव पर भी उसने व्यंग्य किया है। कामदेव शिव जी पर लक्ष्य साधने की तैयारी में है। जाहिर है रति भी उसके साथ ही होगी। उस वक्त वसंत कामदेव से विनोदी भाव से कहता है। -

"तुम जाओ, बूढ़े का करो इलाज
भाभी को चाहे ले जाओ साथ
मगर इन्हें तुम रखना अपने पास
मत करना उस खूसट पर विश्वास।"[88]

इस तरह वसंत ऋतु होकर भी मानवीय पात्र प्रतीत होता है। वह काम और रति के बीच विवाद सुलझाने का प्रयास करता है तथा रति की सांत्वना भी करता है। 'भस्मांकुर' का एक महत्वपूर्ण पात्र के रूप में वह हमारे सामने आता है।

शिवजी :-

शिव जी 'भस्मांकुर' का एक महत्वपूर्ण पात्र हैं। वे कथानक को आगे बढ़ाने का कार्य करते हैं। दक्ष प्रजापति की कन्या सती शिव की पहली पत्नी थी। अपने पिता के यहाँ पति का अपमान होते

देख उसने स्वयं आत्मदाह किया था। इसके बाद शिव विरक्त होकर कैलाश पर तपस्या में लीन हो गए।

शंभु, शितिकंठ, शिव, महेश, महारुद्र, शंकर, देवाधिदेव, प्रलयंकर आदि नामों से शिव का उल्लेख हुआ है। इसके अतिरिक्त कामदेव से जुड़े हुए कुछ नामों का भी उल्लेख मिलता है। जैसे - कामेश्वर, मदनेश्वर, मन्मननाथ आदि। इससे यह प्रतीत होता है कि महाप्रभु ने कामदेव को जलाया नहीं था। लीला की थी। खिलवाड़ किया था।" [89]

अ) क्रोधी शिव :-

देवताओं में शिव जी अपने क्रोधी स्वभाव के लिए ख्यात है। निम्नलिखित काव्यपंक्तियों से इसका अनुमान लगाया जा सकता है -

"भड़क उठा कोपानल, तड़का भाल
महारुद्र निज को पाए न सँभाल
विद्युत-गति से छूटा नयन-कृशानु
हुआ प्रमाणित प्रभु का लक्ष्य अचूक
भस्म हो गया तत्क्षण मदन-शरीर
इर्द-गिर्द में व्यापी हा-हा-कार।" [90]

ब) भोलेपन के लिए प्रसिद्ध :-

पहले युगों में जो रुद्र तमोगुणवाली शक्तियों का प्रतिनिधि देवता था, वही बाद में रजोगुणवादी शक्तियों का देवता बना। महादेव के परिवार में भी देवों, देवियों, यक्षों, गंधर्वों, विद्याधरों, पिशाचों, प्रेतों, डाकिनियों का समावेश होता गया। रावण और भस्मासुर जैसे दानव भी शिव के कृपापात्र थे। इतना ही नहीं सजा देने के बाद कामदेव को भी महादेव ने अपना अनुचर बना लिया। [91]

पार्वती :-

पार्वती का चरित्र भी शिव जी की तरह मूल है और स्वयं कवि ने उभारा है। पौराणिक पात्र होकर भी उसके जरिए आज की नारी-भावना उजागर होती है। पार्वती को कवि ने देवी के रूप में न दिखाकर मानवी के रूप में दिखाया है। हिमालय की पुत्री उमा (पार्वती) अद्‌वितीय सुंदरी है। 'भस्मांकुर' में पार्वती अपने सखियों से स्वप्नों की चर्चा करती हैं। इस बारे में डॉ. हरिचरण शर्मा ने कहा है कि, "स्वप्न में शिवमिलन के दृश्य से नागार्जुन ने नारी सुलभ प्रणयभाव को मनोवैज्ञानिक संस्पर्श भी प्रदान किया है।" [92]

अ) अद्‌वितीय सुंदरी :-

पार्वती की सुंदरता अपूर्व थी। मानो विधाता ने एक ही नारी शरीर में समूची विशेषताएँ देखने की इच्छा से उसका निर्माण किया हो। निम्नलिखित पंक्तियाँ इस बारे में द्रष्टव्य हैं। -

"अति सुंदर मुखमंडल, चंपक कांति
हुई मदन को स्वर्णचंद्र की भ्रांति
भृकुटि-सुरेखित आयत पक्ष्मल नेत्र

उन्मद अलि परिपखित पद्म समान
तिल पुष्पोपम नासा, ललित कपोल
कंबुग्रीव, कुंचितशिति, कुंतलजाल..."[93]

अपनी पिता की अनुमति से पार्वती कैलास पर जाकर शिव जी की सेवा करती है। अपनी दो सखियों के साथ मनोयोगपूर्वक वह काम निबटाती आई है। कथावस्तु के विकास में उसका योगदान रहा है।

जया-विजया :-

जया और विजया पार्वती की सहेलियों के रूप में 'भस्मांकुर' में आती हैं। हर वक्त वह पार्वती के साथ रहती हैं। पार्वती अपने स्वप्नों की चर्चा इन्हीं से करती है। पार्वती की हर समस्या सुलझाने में मदद करती हैं। पार्वती शिव जी की सेवा करने हेतु कैलास पर जाती है, तब ये दोनों सहेलियाँ उसके साथ होती हैं।

इनके सिवाय 'भस्मांकुर' में ब्रह्मा, इंद्रदेव, नारदमुनि आदि पात्र केवल नाममात्र हैं। इनका सिर्फ उल्लेख है। ये कथानक में कार्यरत नहीं।

इस तरह नागार्जुन ने अपने लघु काव्य 'भस्मांकुर' में कम पात्रों की योजना करके चरित्रचित्रण में काफी सफलता पाई है। इनके पात्र पौराणिक होकर भी मानवीय लगते हैं। मुख्य पात्रों के साथ ही गौण पात्र भी काफी प्रभावोत्पादक रहे हैं।

3. संवाद :-

पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उद्घाटित करने और कथानक को गति प्रदान करने हेतु संवादों की योजना होती है। 'वर्णनात्मकता' खंडकाव्य की विशेषता होती है। अतः इसमें संवादों का प्रयोग अधिक मात्रा में नहीं किया जाता।

संवादों के प्रयोग से कथावस्तु में प्रवाह, सजीवता एवं औत्सुक्य उत्पन्न होता है। संवादों के द्वारा पात्रों के चरित्र भी उजागर होने में सहायता मिलती है। संवाद पात्र और परिस्थितियों के अनुकूल होने चाहिए, ऐसा न हुआ तो पात्रों का चरित्रचित्रण अस्पष्ट और भ्रामक हो जाएगा। खंडकाव्य के संवाद संक्षिप्त होते हैं।

'भस्मांकुर' में कामदेव और रति के वार्तालाप विशेष मुखर होते हैं। शिव जी की तपस्या भंग करने हेतु कामदेव प्रयत्नशील है। परंतु फिर भी वह साहस नहीं जुटा पा रहा है। उसी अवसर पर रति उसे प्रेरणा देती है। रति से प्रेरणा पाकर कामदेव साहस बाँधता है और रति से कहता है। -

"रहो यहीं तुम अनुपल मेरे पास
हों महसूस तुम्हारे सुरभित श्वास
कुंचित कुंतलराशि... मिले यदि स्पर्श
रग-रग में भर जाती है नवस्फूर्ति।"[94]

देवाधिदेव शिव जी के क्रोध से सभी परिचित है। अतः रति को मदन की चिंता लगी रहती है। उसके मन में बार-बार अशुभ विचार आते रहते हैं। उसे अपूर्व सुंदरी पार्वती का विवाह शिव के साथ अयोग्य प्रतीत होता है। अपने मन की यह बात वह कामदेव से इसप्रकार करती है। -

"मुझको तो प्रिय, लगता है बेकार
सारा नाटक। आखिर वह सुकुमारि
क्यों बूढ़े को करने लगी पसंद?
सुर-समाज की बुद्धि हो गई भ्रष्ट!
करते हैं कैसे-कैसे खिलवाड़
बस यों ही ये ब्रह्मा-विष्णु-महेश..." [95]

नागार्जुन ने 'भस्मांकुर' के वसंत को मानवीय धरातल पर पेश किया है। वह सचमूच ही मानवीय पात्र महसूस होता है। उसके और कामदेव के संवाद विशेष लक्षणीय है। वह कामदेव का मित्र है। अतः रति भी उसे अपना मित्र मानती है। रति और काम के बीच झगड़ा सुलझाने का काम भी वसंत करता है। कामदेव रति से झगड़ा होने पर वसंत से कहता है। -

"समझाओ अपनी भाभी को मित्र,
दिल-दिमाग हैं इसके बड़े विचित्र
देती है दुनियाभर को उपदेश
नहीं भा रहा शिवशंकर का भेस..." [96]

वसंत भी रति को समझाता है तथा फिर कामदेव को बताता है। -

"क्षमा करो अब तुम इसका अपराध!
महारुद्र की क्षमताओं का ज्ञान
होता तो फिर क्यों करती यह भूल!
क्यों निकालती मुख से हल्के शब्द।" [97]

पार्वती अपने सपनों की चर्चा सखियों से करती है। पार्वती के स्वप्नों की घटना मनोवैज्ञानिक है, यह कवि की मौलिक उद्भावना है। परंतु सखियों के साथ की हुई चर्चा जीवंत लगतो है।

"रात्रिशेष में देखा अद्भुत स्वप्न
पहुँचाकर प्रिय तक मुझको, तत्काल
सखि, तुम दोनों चली गई हों दूर।" [98]

"हँसकर प्रिय ने थपकाए थे गाल
इतने-भर से मैं हो उठी निहाल
तरुण वृषभ की त्वरित हो उठी चाल।" [99]

वसंत कामदेव का अत्यंत प्रिय मित्र है। वह मित्र से शिव जी के बारे में कुछ न कुछ बातें करता रहता है। शिव जी पर अनेक स्थानों पर उसने व्यंग्य किया है। काम जब शिव जी को लक्ष्य करने जा रहा था, उस वक्त वसंत का काम से शिव के बारे में यह कहना कि -

"तुम जाओ, बूढ़े का करो इलाज
भाभी को चाहे ले जाओ साथ
मगर इन्हें तुम रखना अपने पास
मत करना उस खूसट पर विश्वास।"[100]

व्यंग्यपूर्ण लगता है।

भस्मांकुर में संवाद सजीव एवं रोचक लगते हैं। पार्वती ज्यादा बातें नहीं करती। सपनों के बारे में सखियों से बातें अवश्य करती है। सखियों से बातचीत भी दूबारा नहीं होती। शिव जी तो पूरी कथा में एक बार भी अपना मुँह नहीं खोलते। कामदेव, वसंत और रति का वार्तालाप ही ज्यादातर सुनाई पड़ता है। उनके संवाद अत्यंत ही सजीव प्रतीत हुए हैं। वसंत के संवादों से तो वह सचमुच ही मानवीय पात्र महसूस होता है। संवाद पात्रों और परिस्थितियों के अनुकूल सिद्ध हुए हैं। भस्मांकुर के अंत में मदन के भस्म होने के पश्चात रति का विलाप करते हुए बंधुसखा वसंत से अपने मन का दुख प्रकट करना, सचमुच ही स्वाभाविक लगता है। -

"देख, कर रही इन प्राणों का अंत
जन्मांतर में दूँगी उसका साथ
फिक्र न करना, करना मुझको माफ
हमें भूल जाना, तू बंधु वसंत।"[101]

4. देश-काल-वातावरण :-

मनुष्य समाज में रहता है, अतः उसका संबंध अपने युग, समाज, परिस्थितियों से रहता है। खंडकाव्य में मानवजीवन का चित्रण होता है। खंडकाव्यकार खंडकाव्य के छोटे-से कलेवर में काफी कुछ कहना चाहता है परंतु उसे अधिक मौका नहीं मिलता। खंडकाव्य में देश-काल-वातावरण के वर्णन के लिए अधिक गुंजाइश नहीं रहती। फिर भी कवि इसका वर्णन संक्षेप में करता ही है। वास्तविक पृष्ठभूमि में पात्रों के कार्यों को दिखाने से चरित्र सहजता से स्पष्ट होता है। स्थानिक विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए प्रकृति की भावानुकूल पृष्ठभूमि देने से रचना में वृद्धि होती है। कुशल वातावरण सृष्टि पर ही खंडकाव्य की सफलता निर्भर होती है।

कैलास पर्वत पर वसंत का अचानक आगमन प्रकृति में एक नया बदलाव ला देता है। प्रकृति में हुए इस अचानक परिवर्तन का कवि ने अत्यंत सुंदर वर्णन किया है। -

"असमय अंकुर, असमय लताविधान
वृद्ध वनस्पतियों का नव परिधान
असमय मुकुलोद्‌गम, मधुमद चहुँ ओर
असमय कुसुमविलास, हास-हिलकोर
गुंजित अलिदल कम्पित कलिकाकोर

असमय चंचल दखिन पवन चितचोर
असमय हरियाली का पारावार
असमय पिककुल मुखरित वारंवार।"[102]

उपरोक्त वर्णन से पाठक को वसंत के उल्लासमयी वातावरण का आभास होता है। प्रकृति का यह वर्णन अत्यंत सजीव लगता है। 'भस्मांकुर' पौराणिक खंडकाव्य है। अतः शिव जी देवता के रूप में उपस्थित है। शिव जी रुद्रावतारी माने जाते हैं। उनके परिवार में पिशाचों, प्रेतों, डाकिनियों का समावेश होता है। उनका वास्तव्य समशान में माना जाता है। इन बातों से अनुमान लगाया जा सकता है, उनका भेस कैसा होगा। कवि ने इसका वातावरण के अनुकूल ही वर्णन किया है -

"भड़कीली कौड़ियाँ, विकट रुद्राक्ष
सौ-सौ जानवरों के हाड़-कलाप
पूँछ-सींग-खुर-बालों वाले खाल
कमल-पीठ, अधजले बाँस औ' काठ
घास-फूस-तृण, फटे-पुराने चीर...
यह भूषण हैं, यही जहाँ शृंगार"[103]

'भस्मांकुर' की कथा कैलास पर्वत के प्राकृतिक वातावरण में घटित हुई है। अतः कवि ने प्राकृतिक दृश्यों को सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है।

"शिशिर-मध्य में पिघल रहा था बर्फ
हरित तृणांकुर छाए थे सब ओर
फैल गई थीं वल्लरियाँ चुपचाप
सूखे वल्कल हरे हो गए आप।"[104]

कवि ने पात्रों की मनोदशा के आधार पर भी वातावरण का निर्माण सफलतापूर्वक किया है। पति मदन के भस्म हो जाने पर रति का मूर्च्छित होना तथा विलाप करना शोकपूर्ण वातावरण निर्माण करता है -

"यह तो बतला दो, हे प्राणाधार!
रहूँ तड़पती मैं अब कितनी देर
मूर्च्छित ही रह जाती मैं चिरकाल
रह जाती मैं निरवधि संज्ञाशून्य
है असह्य अब क्षण भर भी वैधव्य
क्यों न करूँ मैं आत्मदाह तत्काल।"[105]

अतः यह कहा जा सकता है कि देश-काल-वातावरण की दृष्टि से यह सफल रचना सिद्ध होती है। कैलास पर्वतांचल का प्राकृतिक वातावरण कवि ने सफलतापूर्वक चित्रित किया है। साथ ही रति के माध्यम से कवि ने पात्रों की मानसिक दशा की वातावरणनिर्मिति भी सफलता से की है। यह

पौराणिक खंडकाव्य की कथा कैलास पर्वत पर घटित होने के कारण उसमें ज्यादातर प्राकृतिक वातावरण दिखाई देता है।

5. भाषाशैली :-

खंडकाव्य की भाषा महाकाव्य के समान ही उदात्त और गरिमामय होती है। इसकी भाषा में सरलता, कलात्मकता, प्रभावोत्पादकता आदि गुणों का होना आवश्यक है। वस्तुविन्यास सर्गबद्ध तथा सर्गविहीन दोनों प्रकार का हो सकता है। खंडकाव्य में साधारणतः एक ही छंद का प्रयोग होता है। खंडकाव्य के आरंभ में मंगलाचरण, वस्तुनिर्देश अनिवार्य नहीं। खंडकाव्य का नामकरण भी महाकाव्य की भाँति प्रमुख घटना के आधार पर, नायक अथवा नायिका के नाम पर किया जाता है अथवा प्रतीकात्मक होता है।

रचनाकार अपनी रचना को जिस प्रणाली से अभिव्यक्त करता है, उसे शैली कहते हैं। भाषा और शैली का घनिष्ठ संबंध है। भाव यदि स्वयं में आत्मा है तो शैली उसका कलेवर।

नागार्जुन ने अपने काव्य में जनजीवन का चित्रण कर विषय के अनुकूल शैली का प्रयोग किया है। 'भस्मांकुर' खड़ीबोली में लिखा गया खंडकाव्य है। इस काव्य में भावानुकूल शब्दों का प्रयोग हुआ है। इससे विषय प्रतिपादन में स्वाभाविकता आई है। खड़ीबोली प्राचीन काल से साहित्यिक भाषा है। यह जनता की भाषा है, इसीलिए नागार्जुन को प्रिय है। 'भस्मांकुर' की भाषा सीधी-सरल है, कृत्रिमता के लिए इसमें जगह नहीं है। सरल भाषा का प्रयोग उन्होंने जगह-जगह पर किया है।

"हमने देखे स्वप्न तुम्हारे साथ।
गौरी तरुणी, तरुण-तरुण शिवनाथ।" [106]

- - - -

"लगा, मित्र ने मुझे किया है याद
अभी भागता आया हूँ मैं देवि।" [107]

नागार्जुन ने 'भस्मांकुर' में 'संस्कृतगर्भित' खड़ीबोली का भी प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है -

"अर्द्धनिमीलित नेत्र, पलक निस्पंद
अंचल मणिगोलक नासाग्रनिबद्ध
मेरुदंड अति उन्नत, कटि थिरमूल
निहित गोद में पाणि युगल उत्तान।" [108]

- - - -

"देवदारु द्रुम-विरचित-वेदी मध्य
व्याघ्र चर्म पर, पद्मासन-आसीन
शोभित हैं चिर-जागरूक शिवशंभु।" [109]

तत्सम शब्दों तथा तद्भव शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिए - तत्सम :- मुकुलोद्गम, मधुमद, गंध-संधान, अधित्यका। तद्भव :- चहुँ, हुलसित, बेभान, सँपोला, बूढ़ा, पतझर आदि।

कवि ने काव्य में बोलचाल की भाषा का बिना दिक्कत प्रयोग किया है। जैसे :- अनमेल, उटपटाँग, बक-बक, छलिया, शाम आदि।

देशज एवं बोलचाल की भाषा के साथ-साथ कवि ने उर्दू-फारसी शब्दप्रयोग भी किया है :- होश-हवास, इर्द-गिर्द, खातिर, माहौल, साबित आदि।

भाषा में सौंदर्य वृद्धि करने के लिए विभिन्न शब्दों के अतिरिक्त मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग प्रभावपूर्णता लाता है। अपनी बात को या अपने विचारों को संक्षेप में कहने के लिए मुहावरे तथा कहावतों का प्रयोग किया जाता है। 'भस्मांकुर' में ऐसे प्रयोग किए गए हैं।

"यश के भागी, हम होंगे कृतकृत्य...।"[110]

"नन्दन वन ही लाया यहाँ उतार...।"[111]

"करते हैं कैसे-कैसे खिलवाड़...।"[112]

नागार्जुन ने 'भस्मांकुर' में अनेक शैलियों का प्रयोग किया है। खंडकाव्य विशेषतः वर्णनात्मक शैली में लिखा जाता है। परंतु इसके साथ ही विषय की आवश्यकता के अनुसार कवि को विभिन्न शैलियों का प्रयोग करना पड़ता है। कवि ने निम्नलिखित शैलियों का उपयोग इस प्रकार किया है।

वर्णनात्मक शैली :-

'भस्मांकुर' पौराणिक खंडकाव्य है। इसमें कैलास अंचल का प्राकृतिक परिवेश है। वसंत के अचानक आगमन से सृष्टि के अचानक बदलते रूप का चित्रण कवि ने वर्णनात्मक शैली में किया है।

"शिशिर-मध्य में पिघल रहा था बर्फ
हरित तृणांकुर छाए थे सब ओर
फैल गयी थीं वल्लरियाँ चुपचाप
सूखे वल्कल हरे हो गए आप।"[113]

नाटकीय शैली :-

"स्वच्छ बर्फ की धवल-मुलायम शाल
कौन गया है इस शहीद पर डाल।"[114]

आत्मविश्लेषणात्मक शैली :-

'भस्मांकुर' में प्रारंभ में वसंत, कोकिल, भ्रमर, झिल्ली सभी अपना-अपना परिचय देते हैं। आत्मविश्लेषणात्मक शैली में कवि ने इसका प्रयोग किया है। -

"मैं वसंत, मैं मदनसखा सुकुमार
त्रिभुवन पर मेरा अखंड अधिकार।"[115]

- - - -

"मैं नर-कोकिल, मेरी पंचम तान
पीने को उत्सुक रहते हैं कान।"[116]

कवि नागार्जुन की भाषाशैली सरल, सहज, सजीव, रोचक एवं पात्रानुकूल होने के कारण प्रभावोत्पादक बन गई है।

अलंकारविधान :-

नागार्जुन ने अपने काव्य में जान-बुझकर अलंकारों का प्रयोग नहीं किया परंतु भाषा प्रवाह के साथ अपने-आप कुछ अलंकार आए हैं। फिर भी 'भस्मांकुर' अलंकारों से बोझिल नहीं हुआ है।

वक्रोक्ति (शब्दालंकार) :-

"तुम जाओ, बूढ़े का करो इलाज
भाभी को चाहे ले जाओ साथ
मगर इन्हें तुम रखना अपने पास
मत करना उस खूसट पर विश्वास।।" [117]

वीप्सा :-

"उठो-उठो सखि, चलो, करें मधुपान।" [118]

पुनरुक्ति प्रकाश :-

"धन्य-धन्य कुसुमाकर, ऋतुपति धन्य!" [119]

- - - -

"मन-ही-मन वह रही पिलाती डाह..." [120]

उपमा :-

"स्पंदित चपक पंखड़ियों के बीच
दो मणि गोलक चमके शंका श्याम।" [121]

- - - -

"भृकुटि-सुरेखित आयत पक्ष्मल नेत्र
उन्मद अति परिपखित पद्म समान।" [122]

अतिशयोक्ति :-

"ठूँठों में कर दिया स्नेह संचार।" [123]

छंद :-

गद्य साहित्य छंदरहित है तो पद्यसाहित्य छंदोबद्ध। छंदोबद्ध काव्य परिपूर्ण कहलाता है। छंदरहित काव्य अधूरा लगता है। पद्य काव्य रागात्मकता से युक्त होने के कारण छंद काव्य का अपरिहार्य अंग है। किंतु आधुनिक कवि छंद को कम महत्व देते हैं। खंडकाव्य छंदोबद्ध भी हो सकता है और छंदविहीन भी। इसमें कोई अनिवार्यतः नहीं है।

'भस्मांकुर' पुराणाख्यान है। इसमें कवि नागार्जुन ने 'बरवै' छंद का प्रयोग किया है। आदि से अंत तक इसमें एक ही छंद रखा गया है। "आज हमारी वह पुरानी अभिलाषा पूर्ण हुई कि 'बरवै' छंद में एक समग्र 'लघुकाव्य' पूर्ण हुआ।" [124] नागार्जुन ने इस मत को सहमति दर्शाते हुए शिवकुमार मिश्र कहते हैं, "तुलसी और रहिम द्वारा माँजे गए हिंदी के प्यारे-दुलारे बरवै छंद को नया प्राण दिया है नागार्जुन ने।" [125]

नागार्जुन ने 'भस्मांकुर' के मुख्य पात्रों को पौराणिक होते हुए भी आधुनिक रूप में चित्रित किया है। पुराने छंद को नए रूप में पेश किया है। उनके तुकांतहीन पंक्तियों में काव्यसौंदर्य मुखरित होता है।

'भस्मांकुर' में प्रयुक्त छंद के बारे में डॉ. सक्सेना का मत है, "19 मात्राओं के इस सरल एवं सुरीले छंद में कवि नागार्जुन ने जनजीवन का संचार किया है। क्योंकि अभी तक सभी कवि इस छंद का प्रयोग तुकांत के रूप में ही करते रहे हैं और सभी ने अंत्यानुप्रास पर विशेष बल दिया है, परंतु 'भस्मांकुर' में जिस तरह मदन नया रूप धारण करके सभी प्राणियों में व्याप्त हो जाता है, उसी तरह यह बरवै छंद भी अतुकांत रूप धारण करके नए छंद के रूप में अत्यंत सुंदर एवं सजीव हो उठा है।" [126] जैसे :-

"रहो यहीं तुम अनुपल मेरे पास
हों महसूस तुम्हारे सुरभित श्वास।"[127]

6. रस वर्णन :-

रस काव्य का प्राणतत्व है। रस का संबंध भावपक्ष से है। मनुष्य के मन में स्थित स्थायीभाव अन्य उपादानों से परिपुष्ट होकर रस रूप को प्राप्त करते हैं। विभिन्न स्थायीभावों से अलग-अलग रसनिष्पत्ति होती है।

खंडकाव्य के लघु रूप में अनेक रसों का वर्णन नहीं हो पाता। इसमें एक ही प्रमुख रस होता है। अन्य रसों का वर्णन प्रसंगवश होता है परंतु विस्तार रूप में नहीं।

'भस्मांकुर' का मुख्य रस 'शृंगार' है। रसराज का उत्स जिस कृति का नायक हो, तो फिर अंगी रस के और होने का सवाल ही नहीं उठता। [128] शिवकुमार मिश्र के इस कथन से स्पष्ट होता है कि 'भस्मांकुर' का प्रधान रस शृंगार है। अन्य रसों का समावेश भी कवि ने इसमें किया है।

शृंगार रस :-

शृंगार रस का स्थायीभाव है रति। इसके दो भेद हैं - संयोग शृंगार और वियोग शृंगार। दोनों भी खंडकाव्य में मौजूद है।

संयोग पक्ष :-

पार्वती सज-धजकर भक्ति हेतु शिव जी से मिलने जाती है। इस प्रसंग पर कवि ने पार्वती के सौंदर्य के द्वारा संयोग पक्ष का वर्णन किया है। -

"गौरी भावविभोर सलज्ज विनित
चंपकद्युति-तन, रक्तांशुक-परिधान
फूल-फूल से अलंकार विन्यास
हार वलय, मेखला... सभी थे फूल।" [129]

लगता है, पार्वती का सौंदर्य देखकर शिव जी जरूर मोहित होंगे।

वियोग पक्ष :-

काव्य के अंत में शिव जी द्वारा मदन भस्म हो जाता है। मदन रति से बिछड़ जाने से रति बेहद दुःखी होती है। पति वियोग का चित्रण करने में कवि ने बड़ी सफलता पाई है। -

"यह तो बतला दो, हे प्राणाधार!
रहूँ तड़पती मैं अब कितनी देर

यहाँ पड़े हो मदन, भस्म-प्रतिमान
दूँ भी तो क्योंकर आलिंगन दान।" [130]

हास्य रस :-

विचित्र वेषभूषा, कार्य-व्यापार आदि को देखकर हास का भाव हृदय में उत्पन्न होता है। वही हास्य-रस की उत्पत्ति करता है।

मदन और रति अपने लक्ष्य की ओर जाना चाहते हैं। इस वक्त वसंत मदन से व्यंग्यपूर्ण शब्दों में कहता है। जो हास्यरस उत्पन्न करता है।

"तुम जाओ, बूढ़े का करो इलाज
भाभी को चाहे ले जाओ साथ
मगर इन्हें तुम रखना अपने पास
मत करना उस खूसट पर विश्वास।" [131]

करुण रस :-

पति वियोग से रति के हृदय में क्लेश उत्पन्न होता है, जो करुण रस को पुष्टि देता है।

"छलिया निकला निखिल देव समुदाय
यों ही मैं लुट गई अभागिन, हाय!" [132]

भयानक रस :-

ध्यानस्थ शिव जी का रूप, वेशभूषा देखकर मदन भयभीत होता है। कवि ने इस अवसर पर भयानक रस की उत्पत्ति की है।

"अर्द्धनिमीलित नेत्र, पलक निस्पंद
अंचल मणिगोलक नासाग्रनिबद्ध
मेरुदंड अति उन्नत, कटि थिरमूल
निहित गोद में पाणि युगल उत्तान।" [133]

रौद्र रस :-

तपस्या में लीन होते हुए भी मन में पैदा हुए प्रेमभाव का कारण जानने के लिए शिव जी अपने नेत्र खोलते हैं। उन्हें मदन दिखाई देता है। तपभंग होने के कारण उनका कोपानल भड़क उठता है। इसी अवसर पर रौद्र रस की निष्पत्ति हुई है।

"भड़क उठा कोपानल, तड़का भाल
महारुद्र निज को पाए न सँभाल
विद्युत गति से छूटा नयन-कृशानु
हुआ प्रमाणित प्रभु का लक्ष्य अचूक
भस्म हो गया तत्क्षण मदन-शरीर।" [134]

बीभत्स रस :-

शिव जी की तपोभूमि पर विविध प्रकार के गणवेशों में तथा अपने शरीर को रंगाकर शिव जी के गणों को इधर-उधर टहलते देखकर रति के मन में उत्पन्न घृणा से बीभत्स रस की परिणति होती है।

"भड़कीली कौड़ियाँ, विकट रुद्राक्ष
सौ-सौ जानवरों के हाड़-कलाप
पूँछ-सींग-खुर-बालों वाले खाल
कमल-पीठ, अधजले बाँस ओ' काठ।" [135]

इसप्रकार नागार्जुन ने 'भस्मांकुर' में शृंगार रस के साथ ही अन्य सहायक रसों की भी प्रतिष्ठापना की है। विभिन्न भावों की अनुकूल की हुई रस-व्यंजना कथावस्तु को अधिक स्वाभाविक बनाती है।

7. उद्देश्य :-

किसी भी काव्य-सृजन के पीछे कोई न कोई उद्देश्य तो रहता ही है। निरुद्देश काव्यसृजन तो शायद ही कोई करता है। कवि मैथिलीशरण गुप्त जी के शब्दों में,

"केवल मनोरंज न कवि का कर्म होना चाहिए।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।"

काव्य का उद्देश्य तो महान रहता है। महाकाव्य के समान खंडकाव्य का उद्देश्य तो चतुर्वर्ग फलप्राप्ति तो नहीं होता, मगर चतुर्वर्ग में से किसी एक फल की प्राप्ति अवश्य होता है। जीवनादर्श स्थापित करना, राष्ट्रभक्ति, उपेक्षितों का उद्धार, नारी महत्ता आदि।

पुराने काव्यतत्वों को नवीन बौद्धिक परिप्रेक्ष्य देकर युगानुकूल प्रस्तुत करने की इच्छा से प्रेरित होकर कतिपय आधुनिक खंडकाव्यकारों ने पुराने अलौकिक तत्वों को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

'भस्मांकुर' निर्माण के पीछे नागार्जुन का प्रमुख उद्देश्य रहा है - लोकहित। सुरसमाज पर आई आपत्ति को दूर करने के लिए शिव और पार्वती से उत्पन्न शिशु की जरूरत सुरसमाज को थी। यह कार्य संपन्न करने के लिए शिव-पार्वती का विवाह जरूरी कार्य था। इस हेतु पार्वती के प्रति शिव जी के मन में प्रेमभाव जागृत करना, कवि का प्रमुख लक्ष्य रहा है। नागार्जुन ने हमेशा समष्टि का हित देखा है। सुरसमाज की भलाई के लिए शिव को पार्वती की ओर आकर्षित करना प्रमुख उद्देश्य रहा है।

'भस्मांकुर' आकार की दृष्टि से लघु होने पर भी उद्देश्य की व्यापकता विशाल है। 'भस्मांकुर' जीवन के शाश्वत मूल्यों का प्रतिपादन करके व्यापक जीवन की अभिव्यक्ति करता है। इसमें पारिवारिक, सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं के संदर्भ में पुरानी मान्यताओं को व्यक्त करके उससे होने वाली बरबादी की ओर संकेत किया है। रूढ़ि तथा अंधविश्वास नागार्जुन को बेचैन करता

है। अनमेल विवाह जैसी पद्धतियाँ समाज को अनैतिक बनाती है। वसंत को मदन के दोस्त के रूप में अभिव्यक्त करके आदर्श-मित्रत्व का संदेश दिया है।

'भस्मांकुर' का उद्देश्य रहा है - जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण स्थापित करना। 'भस्मांकुर' का अर्थ है - भस्म के बाद पैदा होने वाला अंकुर। ध्वंस के बाद अनिवार्यतः उभरने वाला सृष्टि का रूप। इससे प्रतीत होता है कि मृत्यु की तुलना में जीवन की शक्तियाँ प्रबल होती है। इस दृष्टि से डॉ. पाटील का कहना है, "भस्मांकुर नाम का अपना विशिष्ट अर्थ है, भस्म के अंकुर। मृत्यु से जीवन जो समाप्त लगता है, वह समाप्त नहीं हो जाता। समाप्ति में से ही नए जीवन का अंकुरन होता है।" [136]

'काम' का महत्व स्थापित करना भी 'भस्मांकुर' का लक्ष्य रहा है। कामदेव का अस्तित्व है तभी तो संसार में मानव का अस्तित्व है। काम के भस्म होने का अर्थ है - मनुष्यता की वेली सूख जाना। क्योंकि सृष्टि का मूल है वह। "काम के चरित्र का यह उदात्त संदर्भ, उसके व्यक्तित्व का यह नया आयाम न केवल 'भस्मांकुर' को एक नई प्राणवत्ता प्रदान करता है, उसके समूचे प्रतिपाद्य को एक सामाजिकता और प्रगतिशील चिंतनधारा से सार्थक करता है।" [137]

नागार्जुन को विभिन्न उद्देश्यों में काफी सफलता मिली है। 'भस्मांकुर' विभिन्न उद्देश्यों से परिपूर्ण सफल रचना है।

3. भूमिजा : स्वरूप :-

कविवर नागार्जुन द्वारा लिखित 'भूमिजा' एक सफल कृति है। रामायण के विख्यात कथानक से कुछ महत्वपूर्ण प्रसंगों को उठाकर कवि ने उसे अपने अंदाज से अभिव्यक्ति दी है। रामकथा को प्रगतिशील, यथार्थवादी जनदृष्टि से वैचारिक कसौटी पर परखने के उद्देश्य से कवि नागार्जुन ने रामकथा के तीन प्रसंगों को चुना है। तीनों प्रसंग अयोध्या के राजतंत्रीय परिसर अथवा लंका विजययात्रा के कूटनीति भरे परिवेश से सर्वथा दूर लोकभूमि में घटित होते हैं।

राम तरुण-सुलभ कौतुहल से आह्लादित, दाँव-पेंच से अनभिज्ञ रघुकुलीन अनुशासन से सर्वथा दूर वन प्रांत में महान ऋषि विश्वामित्र से शिक्षा ग्रहण करते हुए मुक्त विचरण करते हैं। जनहितैषी ऋषियों के यज्ञ की रक्षा करते हुए राक्षसों को मारते हैं तथा पुरुष वर्ग के अविश्वास से अभिशप्त होकर पाषाणी बनी अहल्या को आत्मचेतना दान कर पुनर्जीवित करते हैं।

दूसरी ओर भूमि से उपजी 'भूमिजा' सीता है, जिसे अयोध्या बर्दाश्त नहीं कर पाया तो वाल्मीकि ऋषी के आश्रम में रहकर अपने दोनों बच्चों को इसी परिवेश में संस्कारशील एवं सामर्थ्यवान बनाती है।

गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या पति के अभिशाप से अभिशप्त होकर पाषाणप्राय होती है। श्रीराम के चरणस्पर्श से उसमें चेतना का संचार होता है।

'भूमिजा' की रचना के मूल में लोकजीवन के साथ ही भारतीय नारी की जीवनगाथा कहीं अधिक प्रेरक है। नागार्जुन ने रामकथा के भीतर नारी जीवन की त्रासदी और नारी सुलभ संवेदनाओं को

मार्मिक अभिव्यक्ति दी है। नारी के प्रति सम्मान का भाव ही नागार्जुन को सीता और अहिल्या के जीवन के करुण प्रसंगों को अभिव्यक्ति देने को विवश करता है। 'भूमिजा' नाम से ही हमें ज्ञात होता है कि यह भूमि से उत्पन्न 'सीता' की कहानी है। सीता उन तमाम नारियों का प्रतिनिधित्व करती है, जो शोषित है, अत्याचारित है।

'भूमिजा' में अभिव्यक्त प्रसंगों का उपजीव्य वाल्मीकि कृत रामायण है। परंतु नागार्जुन ने तीन स्वतंत्र प्रसंगों को कथा का एक रूप दिया है, जिसके मूल में नारी जीवन के प्रति कवि का सम्माननीय दृष्टिकोण है। 'भूमिजा' पौराणिक खंडकाव्य होकर भी कवि ने उसे आधुनिक परिप्रेक्ष्य में देखा है। पौराणिक नारी समस्या को आधुनिक नारी समस्या के रूप में परखने की दृष्टि से अभिव्यक्ति दी है।

महान ऋषि विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण का वनप्रस्थान, राक्षस वध, अहल्या उद्धार, वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में सीता का लव-कुश के साथ निवास और अंत में सीता का धरती में समा जाना आदि प्रसंगों की योजना 'भूमिजा' के अंतर्गत हुई है।

4. खंडकाव्यों के तत्वों के आधार पर 'भूमिजा' का मूल्यांकन :-

1. कथावस्तु :-

'भूमिजा' की काव्यपंक्तियों को देखने पर स्पष्ट होता है कि इसमें विविध प्रसंगों से कथानक की निर्मिति की है। कवि नागार्जुन ने पौराणिक महाआख्यान 'रामायण' से प्रेरणा लेकर तीन महत्वपूर्ण प्रसंगों को लेकर 'भूमिजा' की रचना की है। रामकथा के इन प्रसंगों में राम राजा राम न होकर लोकधर्मी राम रहे हैं। "भूमिजा के राम पूरी रामकथा के राम से अधिक जनोनुकूल अंततः शाश्वत एवं सनातन हैं। लोकधर्म की इसी कसौटी पर कसने के लिए कवि नागार्जुन ने चतुर जौहरी की भाँति रामकथा के विविध स्वर्णिम प्रसंगों में से उन तीन प्रसंगों को ही चुना है, जो खुद ही बन गए हैं।" [138]

महर्षि विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को लेकर यज्ञ को सफल बनाने हेतु वनआश्रम में गए हैं। वहाँ ताड़का राक्षसी और उसके पुत्रों ने वन में आतंक मचा रखा है। विश्वामित्र के यज्ञ को असफल करने पर वह तुली हुई है। राम एक बाण से ही उसे मार गिराते हैं तथा यज्ञ सकुशल पूर्ण करने हेतु मदद करते हैं।

थोड़ा आगे चलकर वन में राम-लक्ष्मण को पाषाणी नजर आती है। पाषाणी को राम का स्पर्श होते ही उसमें प्राणसंचार होता है। पाषाणी, जो कि गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या है, सारा वृत्तांत राम को बताती है। किस तरह पति के अविश्वास से पतिद्वारा शापित होना पड़ा इसका वृत्तांत राम को बताती है। साथ ही अनजाने भी कभी नारी जाति पर अन्याय न करने का वचन राम से लेती है।

आगे कवि ने सीता के मन में उठे विचारों को, उसकी तड़प को आत्मालाप शैली में अभिव्यक्ति दी है। वह युग परिवर्तन का विचार करती है। त्रिजटा को स्वप्न में सीता के प्रवाह में डूब जाने का

दृश्य दिखाई देता है। अतः वह सीता से मिलने आती है। वह सीता के उज्ज्वल भविष्य के बारे में सोचती है।

कवि ने आखिरी प्रसंग में सीता का भूमि में समाना, उसके बाद की विषादभरी स्थिति का वर्णन किया है।

इस प्रकार कवि ने 'भूमिजा' की कथावस्तु में विविध प्रसंगों की योजना की है। वह सफल खंडकाव्य कृति होकर भी त्रिविध प्रसंगों की योजना इसे कथाकाव्य के निकट ला देती है। इस दृष्टि से डॉ. सिंह का कथन लक्षणीय है, "भूमिजा को लघु काव्य की संज्ञा दी जा सकती है। नागार्जुन ने इसी प्रकार का एक अन्य काव्य रचा 'भस्मांकुर'। परंतु 'भस्मांकुर' खंडकाव्य की श्रेणी का काव्य है और 'भूमिजा' का कोई केंद्रीय चरित्र इस प्रकार से नहीं है। इसमें एक से अधिक कथाएँ हैं। इसलिए 'भूमिजा' को कथ काव्य भी कहा जा सकता है।" [139]

2. चरित्र चित्रण :

'भूमिजा' पौराणिक खंडकाव्य होकर 'सीता' को केंद्र में रखकर ही इसका निर्माण हुआ है। 'सीता' इसमें नायिका के रूप में चित्रित है। सीता के साथ ही अहल्या, राम, विश्वामित्र, लक्ष्मण, त्रिजटा मुख्य पात्र हैं। गौण पात्रों में दशरथ, कौशल्या, लव-कुश, ताड़का, वाल्मीकि आदि का समावेश हैं। वे केवल संदर्भ मात्र हैं, मुखर नहीं।

1. सीता :

सीता 'भूमिजा' का प्रमुख पात्र होकर नायिका है। 'भूमिजा' नाम से ही पता चलता है कि भूमिजा - भूमि से उत्पन्न (सीता) की कहानी इसमें वर्णित है। सीता की उत्पत्ति अनूठे ढंग से हुई थी। नदी के किनारे आम के बगीचे वाले खेत में हलवाहा खेत जोत रहा था। हल की नोंक से ढक्कन से ढका एक घड़ा निकला। जिसमें से सीता निकली। [140]

सीता की चारित्रिक विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

अ) आदर्श रूप में :

भारतीय संस्कृति में सीता को लक्ष्मी के रूप में देखा जाता है। जिस प्रकार भारतीय संस्कृति में मर्यादा पुरुषोत्तम राम पूजजीव है, उसी प्रकार राम की पत्नी सीता भी पूजनीय है। पतिव्रता स्त्री के रूप में उसका गौरव किया जाता है। अपने पतिव्रत, सहनशीलता, त्याग आदि गुणों के कारण वह भारतीय स्त्रियों के सामने आदर्श रखती है। 'भूमिजा' में आदर्श पत्नी तथा आदर्श माता के रूप में उसका वर्णन हुआ है। उसके उज्ज्वल चरित्र का मूलाधार उसका अटल पतिव्रत धर्म है।

गर्भावस्था में पतिद्वारा पुनः वनवास भेजने पर उस निर्वासन को पति का धर्मपालन कहकर मन को समझाने वाली सीता का आदर्श पत्नीत्व उसे सामान्य मानवी धरातल से ऊँचा उठाता है। वनवास काल में महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में रहकर सीता लव-कुश जैसे सुपुत्रों को जन्म ही नहीं

देती बल्कि उनपर अच्छे संस्कार भी करती हैं। तीर चलाने का अभ्यास, अस्त्र-शस्त्र, विद्या अध्ययन आदि विद्याओं में वह तथा वाल्मीकि लव-कुश को माहिर बनाते हैं।

"धनुष चलाने का इनका अभ्यास
देख-देखकर सभी हम हैं दंग
अति अद्भुत हैं इनकी वाचा-शक्ति
दूर-दूर तक फैल गए हैं नाम" [141]

आ) उपेक्षिता रूप :-

सीता को अयोध्या नगरी कभी रास नहीं आई। रावण पराजय के बाद सीता को अपनी पवित्रता को प्रमाणित करने के लिए अग्नि-परीक्षा देनी पड़ी। केवल लोकमर्यादा के लिए अपने आपको ऐसे प्रस्तुत करना, उसे अच्छा नहीं लगा। इसके बाद भी केवल लोकमर्यादा के खातिर ही राम ने उसे पुनः वनवास भेज दिया, जिस वक्त वह गर्भिणी थी। ऐसी अवस्था में महामुनि वाल्मीकि के आश्रय में रहकर वह जुड़वाँ बच्चों को जन्म देती है। इस तरह सीता जैसी आदर्श नारी को लोकमर्यादा के खातिर उपेक्षित जीवन व्यतीत करना पड़ा।

इ) सहनशीलता :-

'भूमिजा' की सीता सहनशीलता का बेजोड़ नमूना है। वर्षों तक वनवासी पति के साथ रहने वाली, रावण के अशोक वन में बंदी बनकर अनेक कष्ट झेलने वाली, युगों से अश्रुस्नात सीता जब चिर प्रतीक्षा के बाद पतिमिलन के सुखद क्षणों के पास पहुँचती है, तो उसकी आकांक्षाओं पर पाला पड़ जाता है। जिस पति की वह अपेक्षा करती है, वहीं पति उसकी उपेक्षा करता है। उसको अग्निपरीक्षा देनी पड़ती है। अपने पतिव्रत का प्रमाण देने पर भी केवल लोकभय के कारण गृह निष्कासन का कठोरतम दंड भी देते हैं। इन सभी परिस्थितियों से सीता ने मानो समझौता ही कर लिया था। इससे अधिक सहनशीलता का उदाहरण और क्या हो सकता है?

ई) स्वाभिमानी :-

रघुकुल के एकपक्षीय मर्यादा और न्याय के प्रति सीता नारीसुलभ आक्रोश व्यंग्यपूर्ण शब्दों में व्यक्त करती है। उसका स्वाभिमान बोलता है कि आखिर वह बार-बार अपनी चारित्रिक शुद्धता के पक्ष में सफाई क्यों दे? उसका आक्रोश इस तरह व्यक्त होता है। -

"प्रमाणित क्या करना है मुझे?
पावनता अपनी? अपना शील?
प्रमाणित क्या करना है मुझे?
गुह्य शुचिता? चारित्रिक ओज?" [142]

इतिहास में नाम-कीर्ति कमाने के लिए राम भले ही प्रजाहितैषी बने, उसके साथ तो अन्याय किया गया था। इसीलिए सीता आत्मसम्मान के साथ अपने बेटों सहित मुनि वाल्मीकि के आश्रय में रहना पसंद करती है।

उ) त्याग की मूर्ति :-

अपने आपको धरती में समर्पित करने से महान त्याग और क्या हो सकता है? त्यागी वृत्ति तो उसमें पहले से ही थी। तभी तो सब राजविलास त्यागकर वह अपने पति के साथ चौदह वर्षों तक वनवास में रहती है।

पुनः वनगमन की बात सुनकर वह दुखी हो उठती है परंतु शीघ्र ही आँचल से आँसू पोंछकर कहती है -

"वही करूँगी जो कुछ करने की मुझको आज्ञा होगी।
त्याग करूँगी, इष्ट-सिद्धि के लिए बना मन योगी।
सुख-वासना, स्वार्थ की चिंता दोनों से मुँह मोड़ूँगी।
लोकाराधन या प्रभु-आराधन के निमित्त सब छोड़ूँगी।" [143]

ऊ) नए युग की आकांक्षिणी :-

सीता मुनिवर वाल्मीकि के आश्रय में बैठी विचार करती है। रघुकुल की एकपक्षीय मर्यादा, एक न्याय करने वाले श्रीराम तथा रघुकुल के प्रति उसके मन में आक्रोश पैदा होता है। अतः वह ऐसे युग परिवर्तन की कल्पना करने लगती है, जहाँ आडंबर, झूठी प्रतिष्ठा को कहीं जगह नहीं मिलेगी। जब सभी सच बोलेंगे, झूठ मोम की तरह गल जाएगा। सभी को सहज-सुलभ न्याय मिलेगा। हर कोई स्वयं अनुशासनबद्ध होगा। राजा अफवाहों पर ध्यान नहीं देंगे। जनजीवन में ग्लानि नहीं होगी। नर-नारी दोनों के लिए न्याय, विद्या, बुद्धि, विवेक, मर्यादा समान होंगे। शासक सही जाँच-पड़ताल के बाद ही किसी को दोषी सिद्ध करने के बाद सजा दें।

इस तरह 'भूमिजा' सीता विभिन्न रूपों में प्रकट हुई है। उसके चरित्र के विभिन्न पहलुओं को कवि ने अभिव्यक्ति दी है।

2. अहल्या :-

अहल्या 'भूमिजा' का दूसरा महत्वपूर्ण पात्र है। अहल्या महर्षि गौतम की पत्नी है। राम और लक्ष्मण महर्षि विश्वामित्र के साथ मिथिला की ओर जा रहे थे। तीनों गौतम ऋषि के आश्रम में पहुँचे। वहाँ विश्वामित्र राम को पत्थर में जान डालने को कहते हैं। यही पत्थर ही गौतम पत्नी अहल्या है।

देवराज इंद्र छल से मुनि के वेश में अहल्या के पास आए। वह उनके छलावे को समझ नहीं पाई। मुनि गौतम इस छल-सत्य को बर्दाश्त नहीं कर पाए और पत्नी को शाप दे बैठे। इस कारण अहल्या को पुरुष वर्ग से घोर घृणा हो गई। पुरुष वर्ग के प्रति उसका आक्रोश इन पंक्तियों में व्यक्त होता है। -

"पत्नी के प्रति पति का वह अन्याय
हुई अहल्या जो पाषाण प्राय,
तात, किया तुमने समुचित प्रतिकार।
पुरुषों पर भी मुझको घृणा अपार।" [144]

कवि नागार्जुन ने अहल्या का चरित्र आत्माभिमान से युक्त अभिव्यक्त किया है। तभी तो मुनि के लांच्छनास्पद शब्दों को सुनकर अहल्या में ग्लानि पैदा हो गई। उसने पति से कोई प्रतिवाद नहीं करना चाहा और मूर्च्छाप्राप्त हो गई। राम के पावनस्पर्श से चेतना प्रदान होने के बाद अहल्या राम को बताती है -

"सह न सकी मैं मुनि का यह आक्षेप,
लगा टूटने रह-रह कोंढ-करेज
फिर भी किया नहीं मैंने प्रतिवाद
रोष गरल की भाँति हो गया व्याप्त
चेष्टाएँ भी रह न सकीं अनिरुद्ध
धराशायिनी बनी, वत्स मैं, हंत!" [145]

इस तरह कवि ने अहल्या के चरित्र के महत्वपूर्ण पहलू पर प्रकाश डालने की कोशिश की है।

3. राम :-

'भूमिजा' के प्रारंभ में ही हमें 'राम' के दर्शन होते हैं। 'भूमिजा' के राम राजा राम न होकर महान ऋषि विश्वामित्र के साथ शिक्षा ग्रहण करते हुए मुक्त आचरण करते हुए दिखाई देते हैं। विश्वामित्र की यज्ञ की रक्षा करते हुए वे राक्षसों को मार गिराते हैं। परिणामतः महर्षि विश्वामित्र अपने संकल्पित यज्ञ को विधिपूर्वक पूर्ण कर सकते हैं। यज्ञसमाप्ति के बाद अपने पावनस्पर्श से गौतम पत्नी अहल्या का उद्धार करते हैं।

'भूमिजा' रामकथा पर आधारित नायिकाप्रधान काव्य है। अतः इसमें राम के चरित्र को अधिक अवसर नहीं मिला है।

4. लक्ष्मण :-

जहाँ राम का उल्लेख होता है, वहाँ लक्ष्मण का नाम भी अवश्य आता है। राजा दशरथ की तीसरी पत्नी सुमित्रा से उत्पन्न लक्ष्मण भातृभक्त थे। उन्होंने राजविलास त्यागकर वनवास काल में भी बड़े भाई राम का साथ दिया था। सीता की अग्निपरीक्षा के समय राम की आज्ञा से इन्होंने ही चिता रचाई थी। इसी तरह लांछित सीता को राम की आज्ञा से लक्ष्मण ने ही तपोवन पहुँचाया था। इन्हीं बातों से पता चलता है कि लक्ष्मण आज्ञाकारी भातृभक्त थे। राम की आज्ञा को भगवान की आज्ञा समझकर पालन करते थे।

'भूमिजा' में महर्षि विश्वामित्र के संकल्पित यज्ञ को विधिपूर्वक संपन्न करने हेतु राम के साथ लक्ष्मण भी चले थे। वह हर स्थान पर, हर समय राम के साथ होते थे तथा राम की सेवा में अपनी धन्यता मानते थे।

'भूमिजा' में लक्ष्मण रान के सहयोगी पात्र के रूप में चित्रित हुए हैं।

5. विश्वामित्र :-

महर्षि विश्वामित्र पुरुवंशी महाराज गाधि के पुत्र कहलाते हैं। इनके आश्रम में राक्षसों ने उत्पात मचाया था। वे यज्ञ को संपन्न नहीं होने दे रहे थे। अतः विश्वामित्र महाराज दशरथ से

अनुमति लेकर राम और लक्ष्मण को अपने साथ ले आए थे। विश्वामित्र के आदेश से ही राम-लक्ष्मण ने ताड़का राक्षसी का वध किया था तथा अहल्या का उद्धार किया था। विश्वामित्र के कहने पर ही राम और लक्ष्मण मिथिला गए जहाँ उनका विवाह संपन्न हुआ। एक परोपकारी ऋषि के रूप में वे जाने जाते थे।

महर्षि विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को विविध कहानियाँ सुनाते थे। वन में राक्षसों ने मचाए उत्पात का वृत्तांत वे राम और लक्ष्मण को सुनाते हैं तथा सरयू उद्गम, गंगा का धरती पर आविर्भाव आदि बातों का ज्ञान वे उनको देते हैं।

'भूमिजा' में विश्वामित्र का चरित्र एक महान तपस्वी, परोपकारी, ज्ञानी आदि विशेषताओं से युक्त है।

6. ताड़का :-

ताड़का राक्षसी है। महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ को ताड़का और उसके बेटे मारिच और सुबाहु असफल करने पर तुले हुए हैं। वन में उन्होंने आतंक मचा रखा है। उसका शरीर ताड़ जैसा लंबा है, इसलिए उसका नाम ताड़का पड़ा। वह मनुष्य की गंध बहुत जल्द पहचानती है। उसके बारे में महर्षि विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को बताते हैं। -

"आसपास के ग्राम निगम देहात
उस दुष्टा ने डाले सभी उजाड़ !
लगा हुआ है कंकालों का ढेर।
राम देखना दिन में यह अंधेर।"[146]

उपरोक्त काव्य-पंक्तियों को देखने पर ताड़का की हिंस्रता का अनुमान लगाया जा सकता है। 'भूमिजा' में वह अमानवीय चरित्र बनकर आई है। मुनि विश्वामित्र से संकेत पाकर राम ताड़का को एक बाण से ही मार डालते हैं।

7. त्रिजटा :-

रावण की बहन त्रिजटा अशोक वाटिका में सीता के साथ आत्मीय भाव से जुड़ गई थी। रावण ने सीता को अशोक वाटिका में रख दिया था। वहाँ अनेक राक्षसियाँ नियुक्त थीं, जो सीता को डरा-धमकाकर रावण की सहचरी बनाना चाहती थी। उन्हीं में से त्रिजटा एक थी, जो एकांत में सीता को सांत्वना देती थी।

'भूमिजा' में त्रिजटा सीता की कुशल जानने के लिए चली आई थी। रात्रि के अंतिम प्रहर में वह बुरा स्वप्न देखती है कि सीता बाढ़ में डूब गई है। उसकी हालचाल जानने के लिए वह लंका से यहाँ तमसा तट पर पहुँची थी। उस वक्त लव-कुश को देखकर वह सीता के कुशल भविष्य के बारे में सोचती है। उसे विश्वास है कि लव-कुश उसकी माँ पर लगे इल्जामों को धो डालेंगे।

इस तरह त्रिजटा का चरित्र 'भूमिजा' में आदर्श रूप में अभिव्यक्त हुआ है। राक्षसी होकर भी मानवी गुणों से युक्त है।

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

8. लव-कुश :-

लव-कुश सीता के जुड़वाँ बेटे थे। लोकापवाद के भय से सीता को गर्भावस्था में ही वन भेज दिया जाता हैं। वही वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में आश्रय पाकर सीता दोनों बच्चों को जन्म देती हैं। महर्षि वाल्मीकि ने उन बच्चों को अस्त्र-शस्त्र चलाने में माहिर बनाया तथा विद्याभ्यास संपादित किया।

'भूमिजा' में सीता अयोध्या के कृत्रिम आडंबर से युक्त प्रणाली के बारे में सोचती हुई लव-कुश के विषय में सोचते-सोचते उनमें खो जाती हैं। सीता के आत्मालाप में लव-कुश के चरित्र उजागर हुए हैं। लव और कुश स्वयं मुखरित न होकर सीता के द्वारा उनकी पहचान हमें होती हैं।

9. वाल्मीकि :-

भृगु वंश में उत्पन्न वाल्मीकि आदि कवि माने जाते हैं। 'भूमिजा' में उनका परिचय हमें अंत में होता है। वैसे देखा जाए तो 'रामायण' प्रणेता महर्षि वाल्मीकि ही है। 'वाल्मीकि रामायण' से प्रेरणा लेकर ही नागार्जुन ने 'भूमिजा' की रचना की है। सीता के भूमि में अंर्तधान होने के बाद, रामकथा के अंत में हमें मुनिवर वाल्मीकि का परिचय होता है।

इनके सिवाय 'भूमिजा' में दशरथ, कौशल्या, गौतम आदि पात्रों का सिर्फ उल्लेख हुआ है। कथानक में कार्यरत नहीं।

इस तरह 'भूमिजा' इस रामकथा पर आधारित खंडकाव्य में कवि नागार्जुन ने पात्रों के चरित्र-चित्रण में सफलता पाई हैं। मुख्य पात्रों के साथ-साथ गौण पात्र भी अपना प्रभाव छोड़ते हैं। इनके पात्र मानवीय प्रतीत होते हैं।

3. संवाद :-

'भूमिजा' में राम और लक्ष्मण के बीच वार्तालाप, महर्षि विश्वामित्र का राम-लक्ष्मण को वृत्तांत सुनाना तथा गौतम पत्नी अहल्या और राम का आपसी संवाद तथा सीता और त्रिजटा, साथ ही वाल्मीकि का आत्मकथन विशेष मुखर होते हैं।

महर्षि विश्वामित्र राजा दशरथ की अनुमति से राम और लक्ष्मण को अपने साथ वन प्रदेश में ले आए हैं। रास्ते में चलते उनको अपने पिता और माताओं की याद आती है। उस वक्त लक्ष्मण बड़े भाई राम से कहते हैं -

"याद आ रहे मुझको बारंबार
वृद्ध पिता के सजल स्निग्ध वे नेत्र।
शिशिर निशा के हिमाच्छन्न शशितुल्य
माताओं के मुँह आते हैं याद।" [147]

राम और लक्ष्मण समवेत विश्वामित्र बैठे ताड़का राक्षसी की चर्चा कर रहे हैं। उस अवसर पर विश्वामित्र ताड़का के बारे में उन दोनों को बताते हैं। -

"सुनो दाशरथि इस वन का वृत्तांत
महाविकट राक्षसी ताड़का एक,

दस हजार हाथी की जिसमें शक्ति
इस वन पर है उसका ही अधिकार।" [148]

उपरोक्त कथन से ताड़का की शक्ति के बारे में अंदाज लगाया जा सकता है।

महर्षि विश्वामित्र के आदेश से राम पाषाणी बनी अहल्या का उद्धार करते हैं। राम अहल्या को अपना परिचय देते हैं तथा पाषाणी बनने की वजह पूछते हैं। अहल्या अपना परिचय देती है -

"गौतम-ढार, अहल्या मेरा नाम
यहीं कहीं होंगे मुनि भी हे राम!
दिया उन्हीं ने मुझको यह अभिशाप
परनर दूषित, पुंश्चलि, तेरी देह,
हो जाए निस्पंद कुलिश-पाषाण।" [149]

अहल्या अपनी जीवनगाथा राम को बताकर उनसे वचन लेती है कि कभी भी नारी के प्रति अन्याय मत होने देना। इसपर राम प्रतिज्ञा लेकर अहल्या से कहते हैं -

"छूकर, अंब, तुम्हारे दोनों पैर
होता राघव राम प्रतिज्ञाबद्ध;
जीवन भर वह तुम्हें रखेगा याद
नारी के प्रति कभी न होगा क्रूर।" [150]

आश्रम में एकांत में बैठी सीता के मन में युगपरिवर्तन की कल्पना आती है। वह अतीत में खो जाती है। उसके मन में आक्रोश पैदा होता है, जिसे नागार्जुन ने आत्मकथनात्मक रूप से मुखर किया है।

"प्रमाणित क्या करना है मुझे?
पावनता अपनी? अपना शील?
प्रमाणित क्या करना है मुझे?
गुह्य शुचिता? चारित्रिक ओज?" [151]

काव्य के अंत में वाल्मीकि का कथन अत्यंत ही मर्मांतक है। सीता भूमि में समा गई है। रामकथा का अंत हुआ है। बूढ़े वाल्मीकि जैसे स्मृतिशेष के संवाद से रामकथा का उपसंहार करते हुए फूट पड़ते हैं -

"मातृ-कुक्षि में समा गई हो पुत्रि
करो वहीं पर निर्विकल्प विश्राम
सुनकर शायद दुखी न होंगे राम
होगा लक्ष्मण को भारी परिताप
लव-कुश वापस जाएँगे साकेत
मैं ही रह जाऊँगा ठूँठ-समान।" [152]

'भूमिजा' में नागार्जुन ने संवादों की योजना पात्रानुकूल एवं प्रसंगानुकूल की है। संवाद सजीवता एवं रोचकता से परिपूर्ण है।

4. देश-काल-वातावरण :-

'भूमिजा' में वर्णित तीनों प्रसंग प्राकृतिक परिवेश में रचे-बसे हुए हैं। यहाँ प्रकृति नगर की कृत्रिम सभ्यता, औपचारिकता से दूर उन्मुक्त वनप्रांत में नदी, पहाड़, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मुनिकुमारों के बीच पल्लवित हुई हैं। 'भूमिजा' में प्रकृति का दो रूपों में चित्रण हुआ है।

1. आलंबन रूप 2. उद्दीपन रूप में।

1. प्रकृति आलंबन रूप में :-

जहाँ प्रकृति का चित्रण स्वतंत्र रूप में किया जाता है, वहाँ उसका आलंबन रूप होता है। 'भूमिजा' में ऐसे कई प्रसंग है। उदा. राम कौसल जनपद के प्राकृतिक परिवेश की ओर संकेत इस प्रकार करते हैं -

"सुजल सुफल बहुविध धनधान्य समेत।
लता-गुल्म-तृण-तरु-वल्ली परिव्याप्त।
सरयूजल अभिसिंचित स्फीत समृद्ध।
सुर-नर-मुनि मनमोहन परम ललाम।"[153]

यहाँ प्रकृति अपने बेटों के लिए आँचल में भरे धन-धान्य लुटाती हुई माता-सी प्रतीत होती है।

2. प्रकृति उद्दीपन रूप में :-

प्रकृति नायक तथा नायिका के हृदयगत भावों को उद्दीप्त करती हुई महसूस होती है। नायक तथा नायिका की मानसिक दशा में तीव्रता लाने का काम करती है। उदा; -

"शिशिर निशा के हिमाच्छन्न शशितुल्य
माताओं के मुँह आते हैं याद।"[154]

राम और लक्ष्मण मुनि विश्वामित्र के साथ हैं। उन्हें अपने परिजनों की याद सता रही है। उन्हें माताओं की याद आ रही है। यहाँ प्रकृति उद्दीपन रूप में प्रतीतत होती है।

इस काव्य की नायिका सीता एक ऐसा चरित्र है जो प्रकृति की कोख से उत्पन्न होती है, प्रकृति की गोद में विकसित होती है और अंत में प्रकृति में ही समाहित हो जाती है। अतः स्पष्ट है काव्य में अधिकतर प्राकृतिक वातावरण ही चित्रित हुआ है।

गौतम मुनि के आश्रम में पहुँचने पर वहाँ के परिवेश को देखकर ही अनुमान होता है कि यहाँ कुछ-न-कुछ ऐसा घटित हुआ है, जिसके कारण यह कुटिया उजड़ी हुई दिख रही हैं। -

"सारा प्रांगण था संस्कार विहीन
न तो कहीं पर बिखरे थे नीवार

नहीं कहीं पर वल्कल व मृगछाल
टँगा पड़ा था, विरल-पुष्प-फल-वृक्ष।" [155]

प्रस्तुत काव्यपंक्तियाँ उजड़े हुए परिवेश की वातावरण निर्मिति करने में सफल सिद्ध हुई हैं।

कवि नागार्जुन 'भूमिजा' में प्राकृतिक वातारवण निर्माण करने में अत्यंत सफल हुए हैं। राम और लक्ष्मण का विश्वामित्र के साथ वनभ्रमण का प्रसंग इतनी सजीवता से चित्रित हुआ है कि हमारे आँखों के सामने आदिकालीन मानवी जीवन ही उपस्थित होता है। उदा; -

"लक्ष्मण लाए ढूँढ़ कन्द-फुल-मूल।
जल औ' इंधन ले आए श्री राम।
चकमक पत्थर से निकालकर आब,
चेता दी गई धूनी बस तत्काल।" [156]

नागार्जुन ने सीता की धरती में अंतर्लीन होने का प्रसंग इस तरह चित्रित किया है कि आँखों के सामने पूरा वातावरण खड़ा हो जाता है। -

"पहले उमड़ी थी फेनिल-जलराशि
मटमैली आभामय चारों ओर
हुए विदीर्ण धरा के कोमल वक्ष
कई क्षणों तक गूँज गया आकाश
आसन सहित हुई वह अन्तर्लीन
भूमिगर्भ में समा गई स्वयमेव" [157]

देश-काल-वातावरण की दृष्टि से 'भूमिजा' सफल रचना सिद्ध हुई है। वनप्रांत के प्राकृतिक वातावरण का कवि ने सफलतापूर्वक चित्रण किया है। साथ ही पात्रों की मानसिक दशा की निर्मिति वातावरण निर्मिति में सहायक सिद्ध हुई है। 'भूमिजा' के तीनों प्रसंग प्रकृति की गोद में घटित होने के कारण वातावरण निर्मिति में प्रकृति शीर्षस्थ है।

5. भाषाशैली :-

'भूमिजा' खड़ी बोली में लिखा हुआ काव्य है, जो संस्कृतनिष्ठ है। भावानुकूल शब्दप्रयोग के कारण विषय प्रतिपादन में स्वाभाविकता आई है। कवि नागार्जुन की भाषा की विशेषता है कि उनकी भाषा सामान्य जनता की भाषा होती है, अतः इसमें कृत्रिमता न होकर सरलता है।

संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग 'भूमिजा' में प्रचुर मात्रा में दिखाई देता है। जैसे; -

"श्मश्रु-कूर्च-धवलित, स्थावर मनुरूप
चर्मसार, अतिवृद्ध, प्रलंबित गाप्र" [158]

कविवर नागार्जुन ने सरल भाषा का प्रयोग भी जगह-जगह पर किया है। -

"आँगन में हटकर कुछ थोड़ी दूर
एक झोंपड़ी थी उत्तर की ओर।" [159]

तत्सम शब्दप्रयोग :- गुल्म, परमललाम, सजल, स्निग्ध, नासापुट, केयुरवलय आदि।

अन्य शब्दप्रयोग :- किंवा, निःशब्द, निस्तेज, हतप्रभ, आख्यान आदि।

कवि नागार्जुन ने काव्य में बोलचाल की भाषा का प्रयोग भी किया है। जैसे :- लाड़-प्यार, कलंक, अक्सर, निर्लज्ज आदि।

देशज एवं बोलचाल की भाषा के साथ साथ कवि ने उर्दू-फारसी शब्दों का भी प्रयोग कई स्थानों पर किया हैं। उदा; हासिल, हम-उम्र, तारीफ, बर्दाश्त आदि।

भाषा में सौंदर्य वृद्धि लाने हेतु विभिन्न शब्दप्रयोगों के साथ ही कवि ने काव्य में मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग प्रभावपूर्ण ढंग से किया हैं। उदा; -

"कि तुमने थाम रखे थे हाथ।" [160]

"तिल-तिल करके बढ़ता जाता ज्ञान।" [161]

खंडकाव्य विशेषतः वर्णनात्मक शैली में लिखा जाता है। परंतु विषय की आवश्यकतानुसार कवि को अन्य शैलियों का भी प्रयोग करना पड़ता है। कवि नागार्जुन ने 'भूमिजा' में निम्न शैलियों की रचना की है।

वर्णनात्मक शैली :-

'भूमिजा' के तीनों प्रसंग प्राकृतिक परिवेश में घटित होते हैं। अतः कवि ने प्रकृति का वर्णनात्मक शैली में चित्रण किया है।

"सुजल सुफल बहुविध धनधान्य समेत।
लता-गुल्म-तृण-तरु-वल्ली परिव्याप्त।
सरयूजल अभिसिंचित स्फीत समृद्ध।" [162]

आत्मविश्लेषणात्मक शैली :-

रामद्वारा अहल्या को चेतना प्रदान करने के बाद अहल्या राम को अपना परिचय देती है। कवि ने आत्मविश्लेषणात्मक शैली का यहाँ प्रयोग किया है -

"गौतम-ढार, अहल्या मेरा नाम
यहीं कहीं होंगे मुनि भी हे राम।" [163]

अहल्या उद्धार के प्रसंग के बाद अहल्या राम से उसका परिचय पूछती है। राम के साथ लक्ष्मण भी है। राम अपना परिचय अहल्या को देते हुए कहते हैं। -

"कोसलेश दशरथ के हम हैं पुत्र,
राम-लखन-से साधारण हैं नाम।" [164]

कवि नागार्जुन की भाषाशैली सरल, सहज एवं रोचक होने के कारण प्रभावोत्पादक बन गई है। भावानुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है।

अलंकार :-

नागार्जुन जानबूझकर अलंकार गढ़ने में विश्वास नहीं करते परंतु 'भूमिजा' में स्वाभाविक रूप में अलंकार आ गए हैं।

उत्प्रेक्षा :-

"मुनि गौतम थे ध्यान-मग्न ज्यों मीन
पड़ा हुआ हो निद्रा सुख में लीन।" [165]

उपमा :-

"शिशिर निशा के हिमच्छन्न शशितुल्य
माताओं के मुँह आते हैं याद।" [166]

पुनरुक्ति :-

"सुन सुन यद्‌यपि नानाविध आख्यान।" [167]

विरोधाभास :-

"पालित पशु भी बन जाएँगे वन्य" [168]

अतिशयोक्ति :-

"प्रबल ताप से लहू बन गया बर्फ।" [169]

छंद :-

अप्रचलित छंद 'बरवै' नागार्जुन को प्रिय रहा है। इस मात्रिक अर्धसमछंद के विषम चरण में बारह एवं समचरणों में सात मात्राएँ होती हैं। उदा. -

"बीहड़ पथ के चारण। वज्र कठोर
ये निसर्गप्रिय, श्यामल, युगल किशोर।" [170]

'भूमिजा' में कहीं कहीं सोलह मात्राओं के मात्रिक छंद का प्रयोग भी किया है। इसमें भी कवि ने नियम को तोड़कर स्वतंत्रता से काम लिया है।

कुल मिलाकर हम यह कह सकते हैं कि कवि ने 'भूमिजा' में केवल एक छंद का प्रयोग नहीं किया मुक्त छंद का भी प्रयोग किया है।

6. रस-वर्णन :-

'भूमिजा' काव्य में वर्णित कहानी सीता की है। 'वाल्मीकि रामायण' पर आधारित इस काव्य में हम सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि इसका अंगी रस 'करुण' है। सीता और अहल्या जिस काव्य की प्रमुख पात्र हो, उस काव्य का अंगी रस के और होने का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके साथ ही भयानक, बीभत्स, रौद्र आदि अन्य रसों की योजना भी कवि ने 'भूमिजा' में की हैं।

1. करुण रस :-

शोक यह करुण रस का स्थायीभाव है। अविश्वास के कारण पतिद्‌वारा अहल्या शापग्रस्त हो जाती है। आगे चलकर राम के पावनस्पर्श से उसे शापमुक्ति मिल जाती है। अपने जीवन की करुण कहानी वह राम को बताती है। -

"सह न सकी मैं मुनि का यह आक्षेप,
लगा टूटने रह-रह कोंढ-करेज
फिर भी किया नहीं मैंने प्रतिवाद
रोष गरल की भाँति हो गया व्याप्त
चेष्टाएँ भी रह न सकीं अनिरुद्ध
धराशायिनी बनी वत्स मैं हंत।" [171]

कवि नागार्जुन ने 'भूमिजा' के अंत में, सीता के भूमि में समा जाने के बाद शोकमय वातावरण का निर्माण किया है। पूरा प्राकृतिक परिवेश विषाद से भर उठा है। -

"कल तक थी वह, आज नहीं है, हाय!
छोड़ गई है हमें यहाँ निरुपाय...
देख सकेगा उसे यहाँ अब कौन
सब विषाद में डूबे हैं, सब मौन।" [172]

2. बीभत्स रस :-

मुनि विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण को तनिक दूर चलने पर विकराल विपिन (वन) मिलता है, जो ताड़का के उत्पात से संत्रस्त है। निम्न पंक्तियों में मन में घृणा उत्पन्न होती है -

"श्वापद उठते थे रह-रह चीत्कार
सड़ी लाश की आती थी दुर्गंध।" [173]

इस विकराल विपिन में प्रवेश करने के पूर्व भी राम लक्ष्मण को पृथ्वी का बीभत्स रूप दिखाते हुए कहते हैं -

"सड़ी घास की, सड़े पात की गंध
अध सूखे कर्दम की गीली बास।" [174]

3. भयानक रस :-

काव्य के अंतिम प्रसंग में कवि ने सीता के भूमि में अंतर्लीन होने के बाद उत्पन्न भयांकित वातावरण की निर्मिति की है।

"आतंकित खगमृग कृमि कीट भुजंग
दूर-दूर ही रहे, न फटके पास।" [175]

4. रौद्र रस :-

'भूमिजा' में नागार्जुन ने सीता की भू-समाधि के प्रकृति के भूकंपनयुक्त रौद्र रूप का बड़ा ही सहज वर्णन किया है। -

"पहले उमड़ी थी फेनिल जलराशि
मटमैली आभामय चारों ओर
हुए विदीर्ण धरा के कोमल वक्ष
कई क्षणों तक गूँज गया आकाश।" [176]

5. वात्सल्य रस :-

सीता अपने दोनों पुत्रों ल्व और कुश को महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में जन्म देती है तथा पालन करती है। आश्रम में बैठी अपने दोनों बच्चों के बारे में सोचती हुई उनमें खो जाती है। -

"शब्द-रूप-रस-गंध-स्पर्श... सब बोध
इनमें विकसित हुए साथ ही साथ
किस प्रकार तो फूटे इनके बोल
तुतलाहट में काँपे कैसे होठ।" [177]

इसप्रकार 'भूमिजा' में करुण रस के साथ-साथ अन्य सहायक रस भी विद्यमान है। विभिन्न भावों के अनुकूल रससृष्टि कथा को अधिक सजीव बनाती है।

7. उद्देश्य :-

'भूमिजा' रामकथा पर आधारित पौराणिक खंडकाव्य है। नायिकाप्रधान काव्य होने के नाते 'भूमिजा' का प्रथम उद्देश्य रहा है - उपेक्षित नारी पात्रों के दुख को उद्घाटित करना, वाणी देना।

लोकभय से राम ने सीता को निर्वासित किया। सीता निर्दोष होकर उसपर अन्याय किया गया था। साथ ही अविश्वास के कारण पति के अभिशाप को भुगतने को विवश अहल्या की भी स्थिति वैसी ही है। इन नारी पात्रों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया है।

'भूमिजा' का मूल लक्ष्य झूठी मर्यादा को तोड़ना और राजधर्म को लोकधर्म में बदलना रहा है। 'भूमिजा' की सीता युग परिवर्तन की अपेक्षा करती है। वह अयोध्या की झूठी मर्यादा को तोड़कर सभी के लिए समान न्याय की अपेक्षा रखती है।

नागार्जुन को 'भूमिजा' में अपने उद्देश्य में काफी सफलता मिली है।

उ) कुल निष्कर्ष :-

काव्य साहित्य की प्रमुख विधा है। काव्य कवि के अनुभवों की अभिव्यक्ति हैं। अपनी अनुभूतियों के साथ कवि जब आख्यानों का स्वीकार करता है, तब प्रबंध काव्य का निर्माण होता है। प्रबंधकाव्य काव्य के भेदों में से एक भेद है। प्रबंधकाव्य का ही एक उपभेद है - खंडकाव्य। खंडकाव्य में जीवन के किसी एक पक्ष की अनुभूति का अभिव्यंजन काव्यद्वारा किया जाता है।

जनकवि नागार्जुन की रचना भूमि लोकजीवन का व्यापक क्षेत्र है। सामान्य मनुष्य उनके काव्य का केंद्र रहा है। वे समाज में दो ही वर्ग मानते थे - शोषक और शोषित। शोषितों के प्रति आस्था उनकी रचनाओं में हमें देखने को मिलती है। नारी के प्रति सम्मान और विनम्रता का भाव उनमें स्थित रचनाकार की प्रमुख विशेषता है।

नागार्जुन ने दो पौराणिक खंडकाव्यों की रचना की। 'भस्मांकुर' और 'भूमिजा'। 'भस्मांकुर' कामदहन प्रसंग पर आधारित है और 'भूमिजा' वाल्मीकि रामायण पर आधारित खंडकाव्य होकर

कवि ने पौराणिक कथा के माध्यम से आधुनिक समस्याओं को स्पष्ट करने की कोशिश की है। 'भस्मांकुर' निर्माण के पीछे कवि का उद्‌देश्य रहा है लोकहित तथा 'काम' का महत्व स्थापित करना। उपेक्षित नारी पात्रों के दुख को उद्‌घाटित करना 'भूमिजा' का प्रमुख उद्‌देश्य रहा है। साथ ही राजधर्म को लोकधर्म में बदलना मुख्य लक्ष्य रहा है।

खंडकाव्य के विभिन्न तत्वों के आधार पर नागार्जुन के खंडकाव्य खरे उतरते हैं। नागार्जुन की सहज, सरल भाषा काव्यों में सहज बोधगम्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूचि

	पृ. क्र.
1. आधुनिक हिंदी काव्य और संस्कृति - डॉ. भक्तराज शास्त्री,	17
2. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र, पंचम सर्ग,	9
3. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे,	3
4. काव्यप्रकाश - आचार्य मम्मट,	1/4
5. साहित्य दर्पण - आचार्य विश्वनाथ,	1/3
6. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र,	10
7. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र,	9
8. चिंतामणि : भाग 1 - आ. रामचंद्र शुक्ल,	141
9. साहित्यलोचन - डॉ. श्यामसुंदर दास,	37
10. रसज्ञ-रंजन : आचार्य महावीरप्रसाद द्‌विवेदी,	50
11. काव्य और कला तथा अन्य निबंध - डॉ. जयशंकर प्रसाद,	17
12. आधुनिक कवि - भाग 3, भूमिका	6
13. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र,	19
14. उजली आग - रामधारी सिंह 'दिनकर',	47
15. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे,	6
16. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे,	8
17. काव्य के रूप - गुलाबराय,	15
18. हिंदी के मध्यकालीन खंडकाव्य - डॉ. सियाराम तिवारी,	17
19. काव्यादर्श - दंडी, 1/10, 1/11,	18
20. काव्यादर्श - दंडी, 1/13,	18
21. काव्यालंकार - आचार्य रुद्रट, 1612	
22. काव्य के रूप - गुलाबराय,	19
23. साहित्यलोचन - डॉ. श्यामसुंदर दास,	113

24. वाङ्मय-विमर्श : आ. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, 14
25. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 41
26. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 40
27. काव्य के रूप - गुलाबराय, 22
28. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र, 49/50
29. आधुनिक हिंदी काव्य में रूपविधाएँ - डॉ. निर्मला जैन, 23/24
30. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 38
31. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 38
32. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 39
33. जायसी ग्रंथावली - आ. रामचंद्र शुक्ल, भूमिका - 66/67
34. हिंदी के मध्यकालीन खंडकाव्य - डॉ. सियाराम तिवारी, 34
35. काव्यालंकार - आचार्य रुद्रट, 812
36. साहित्य दर्पण - आचार्य विश्वनाथ, अध्याय 6
37. वाङ्मय-विमर्श : आ. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, 13/14
38. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र, 44
39. काव्य के रूप - गुलाबराय, 21
40. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 143
41. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 39
42. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 143/144
43. साहित्य दर्पण - आचार्य विश्वनाथ, परि.6; श्लोक 126
44. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र, 57
45. हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास - डॉ. भगीरथ मिश्र, 421
46. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुंतला दूबे, 144
47. काव्य के रूप - गुलाबराय, 21
48. काव्य के रूप - गुलाबराय, 117
49. हिंदी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव - डॉ. सरनामसिंह शर्मा, 28
50. संस्कृत आलोचना - द्वितीय खंड - बलदेव उपाध्याय, 62
51. हिंदी साहित्य कोश - सं. डॉ. धीरेंद्र वर्मा, 248
52. हिंदी काव्यशैलियों का विकास - डॉ. हरदेव बाहरी, 5
53. मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्तित्व और काव्य - डॉ. कमलाकांत पाठक, 291/292
54. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र, 67
55. आधुनिक हिंदी काव्य में रूपविधाएँ - डॉ. निर्मला जैन, 208

56. आधुनिक हिंदी काव्य में रूपविधाएँ - डॉ. निर्मला जैन, 208
57. आधुनिक हिंदी काव्य में रूपविधाएँ - डॉ. निर्मला जैन, 223
58. आधुनिक हिंदी काव्य में रूपविधाएँ - डॉ. निर्मला जैन, 223
59. आधुनिक हिंदी काव्य में रूपविधाएँ - डॉ. निर्मला जैन, 148
60. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यसिद्धांत - प्रो. देशराज सिंह भाटी, 43
61. काव्यशास्त्र : विविध आयाम - सं. डॉ. मधु खराटे, 39/40
62. आधुनिक हिंदी काव्य - डॉ. सादिक देसाई, 25
63. हिंदी के मध्यकालीन खंडकाव्य - डॉ. सियाराम तिवारी, 51/52
64. आधुनिक हिंदी खंडकाव्य - डॉ. एस जंकमणि अम्मा, 36
65. आधुनिक हिंदी काव्य - डॉ. सादिक देसाई, 27
66. संस्कृत आलोचना : द्वितीय खंड - बलदेव उपाध्याय, 62
67. हिंदी साहित्य कोश - सं. डॉ. धीरेंद्र वर्मा, 275
68. हिंदी के मध्यकालीन खंडकाव्य - डॉ. सियाराम तिवारी, 40
69. हिंदी साहित्य कोश - सं. डॉ. धीरेंद्र वर्मा, 287
70. 15वीं शताब्दी से 17वीं शताब्दी तक हिंदी काव्यरूपों का अध्ययन (शोधप्रबंध) - रामबाबू शर्मा, 214
71. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डॉ. रामकुमार वर्मा, 475
72. नई कविता के प्रमुख हस्ताक्षर - डॉ. संतोषकुमार तिवारी, 84
73. भस्मांकुर - नागार्जुन, भूमिका, 10
74. भस्मांकुर - नागार्जुन, भूमिका, 10
75. भस्मांकुर - नागार्जुन, भूमिका, 12
76. भस्मांकुर - नागार्जुन, भूमिका में
77. नए कवि : एक अध्ययन - डॉ. संतोषकुमार तिवारी, 112
78. मैथिलीशरण गुप्त : कवि और भारतीय संस्कृति के आख्याता - डॉ. उमाकांत, 212
79. मैथिलीशरण गुप्त : कवि और भारतीय संस्कृति के आख्याता - डॉ. उमाकांत, 213
80. आधुनिक खंडकाव्यों में युगचेतना - डॉ. एन.डी. पाटील, 288
81. भस्मांकुर - नागार्जुन, 52
82. भस्मांकुर - नागार्जुन, 64
83. भस्मांकुर - नागार्जुन, 54
84. भस्मांकुर - नागार्जुन, 73
85. भस्मांकुर - नागार्जुन, 8
86. भस्मांकुर - नागार्जुन, 36

87. भस्मांकुर - नागार्जुन, 46
88. भस्मांकुर - नागार्जुन, 52
89. भस्मांकुर - नागार्जुन, 93
90. भस्मांकुर - नागार्जुन, 69
91. भस्मांकुर - नागार्जुन, 92
92. नए प्रतिनिधि कवि - डॉ. हरिचरण शर्मा, 5
93. भस्मांकुर - नागार्जुन, 53
94. भस्मांकुर - नागार्जुन, 62
95. भस्मांकुर - नागार्जुन, 54
96. भस्मांकुर - नागार्जुन, 56
97. भस्मांकुर - नागार्जुन, 57
98. भस्मांकुर - नागार्जुन, 44
99. भस्मांकुर - नागार्जुन, 44
100. भस्मांकुर - नागार्जुन, 52
101. भस्मांकुर - नागार्जुन, 77
102. भस्मांकुर - नागार्जुन, 35
103. भस्मांकुर - नागार्जुन, 58
104. भस्मांकुर - नागार्जुन, 40
105. भस्मांकुर - नागार्जुन, 73
106. भस्मांकुर - नागार्जुन, 44
107. भस्मांकुर - नागार्जुन, 50
108. भस्मांकुर - नागार्जुन, 60
109. भस्मांकुर - नागार्जुन, 60
110. भस्मांकुर - नागार्जुन, 47
111. भस्मांकुर - नागार्जुन, 46
112. भस्मांकुर - नागार्जुन, 54
113. भस्मांकुर - नागार्जुन, 40
114. भस्मांकुर - नागार्जुन, 81
115. भस्मांकुर - नागार्जुन, 36
116. भस्मांकुर - नागार्जुन, 36
117. भस्मांकुर - नागार्जुन, 52
118. भस्मांकुर - नागार्जुन, 50

119. भस्मांकुर - नागार्जुन,	48
120. भस्मांकुर - नागार्जुन,	68
121. भस्मांकुर - नागार्जुन,	49
122. भस्मांकुर - नागार्जुन,	53
123. भस्मांकुर - नागार्जुन,	59
124. भस्मांकुर - नागार्जुन,	12
125. भस्मांकुर - नागार्जुन,	33
126. हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि - डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना,	488
127. भस्मांकुर - नागार्जुन,	62
128. भस्मांकुर - नागार्जुन,	32
129. भस्मांकुर - नागार्जुन,	66
130. भस्मांकुर - नागार्जुन,	73
131. भस्मांकुर - नागार्जुन,	52
132. भस्मांकुर - नागार्जुन,	71
133. भस्मांकुर - नागार्जुन,	60
134. भस्मांकुर - नागार्जुन,	59
135. भस्मांकुर - नागार्जुन,	58
136. आधुनिक खंडकाव्यों में युगचेतना - डॉ. एन.डी. पाटील,	340
137. भस्मांकुर - नागार्जुन,	29
138. भूमिजा - नागार्जुन, भूमिका	
139. नागार्जुन का काव्य - डॉ. चंद्रहास सिंह,	95
140. भूमिजा - नागार्जुन,	88
141. भूमिजा - नागार्जुन,	65
142. भूमिजा - नागार्जुन,	61
143. वैदेही वनवास - अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध',	54
144. भूमिजा - नागार्जुन,	55
145. भूमिजा - नागार्जुन,	54
146. भूमिजा - नागार्जुन,	45
147. भूमिजा - नागार्जुन,	38
148. भूमिजा - नागार्जुन,	45
149. भूमिजा - नागार्जुन,	53
150. भूमिजा - नागार्जुन,	58

151. भूमिजा - नागार्जुन, 61
152. भूमिजा - नागार्जुन, 78/79
153. भूमिजा - नागार्जुन, 6
154. भूमिजा - नागार्जुन, 38
155. भूमिजा - नागार्जुन, 49
156. भूमिजा - नागार्जुन, 44
157. भूमिजा - नागार्जुन, 76
158. भूमिजा - नागार्जुन, 75
159. भूमिजा - नागार्जुन, 49
160. भूमिजा - नागार्जुन, 62
161. भूमिजा - नागार्जुन, 38
162. भूमिजा - नागार्जुन, 36
163. भूमिजा - नागार्जुन, 53
164. भूमिजा - नागार्जुन, 52
165. भूमिजा - नागार्जुन, 48
166. भूमिजा - नागार्जुन, 38
167. भूमिजा - नागार्जुन, 38
168. भूमिजा - नागार्जुन, 78
169. भूमिजा - नागार्जुन, 54
170. भूमिजा - नागार्जुन, 65
171. भूमिजा - नागार्जुन, 54
172. भूमिजा - नागार्जुन, 77
173. भूमिजा - नागार्जुन, 44
174. भूमिजा - नागार्जुन, 43
175. भूमिजा - नागार्जुन, 76
176. भूमिजा - नागार्जुन, 76
177. भूमिजा - नागार्जुन, 70

* * *